चन्दामामा
अगस्त १९८३
रु २

जीवन और हनु की बातचीत

संचारण के बारे में

आप जैसे नवयुवक अपने जीवन में संचार के महत्व को समझें, इसीलिये, 1983 को सभी जगह 'विश्व संचार वर्ष' के रूप में मनाया जा रहा है। पर संचारण होता क्या है?

यह दूसरे व्यक्ति के साथ सम्बन्ध स्थापित करने की प्रक्रिया है। यह इस समय भी, जबकि आप इसे पढ़ रहे हैं, हो रही है: जीवन और हनु आपके साथ सम्पर्क कर रहे हैं।

जीवन जहां है, किसी न किसी रूप में संचारण होता ही है, भले ही वह कितने भी अपक्व तरीके से होता हो। मामूली कीड़े-मकोड़ों, सभी तरह के पेड़-पौधों व जानवरों से ले कर सबसे अधिक विकसित जीवधारियों तक सभी....एक दूसरे से संचार व सम्पर्क करते हैं। और आवाज, इशारे, चेष्टाएं, स्वाद, स्पर्श, रंग—यहां तक बिजली के करंट तक को प्रयोग में लाया जाता है।

सच तो यह है, एक वयस्क जानवर के पास अपने भाव प्रकट करने के 15 से 35 तक विभिन्न तरीके हो सकते हैं।

मध्य अमेरिका का [illegible] कर बन्दर तो विशिष्ट तरह से चीख सकता है। एक चीख अपनी जातिवालों को सम्भावित हमले या आक्रमण की चेतावनी देती है। दूसरी का, अर्थ होता है, "भोजन के लिये इधर आओ"। किसी नर बन्दर के राजी न होने पर शोर मचता है और झगड़ा होने लगेगा।

उल्लू अपनी चोंच से टर्राकर, पंखों को साथ-साथ फड़फड़ाकर यहां तक गा कर संकेत देता है। उल्लू का गाना, शोर से घुघुआने से लेकर चीं चीं करने, सीटी बजाने व गिटकिरी के रूप में होता है। खतरा आने पर जब वह छिप जाता है तो रैटल (अमरीकी) सांप की तरह सावधान करने के लिये भिनभिनाता है। जंगल में प्रेम जताते समय उल्लू झुककर नमस्कार सा करते हैं, नाचते हैं और ऊपर नीचे कूदते हैं। बचाव के लिये अपने शरीर को हिलाते और चोंच से टर्राते हुए अपने डैनों को थोड़ा सा फैलाकर अपने पंखों को फुला लेते हैं।

मधु-मक्खी के नाचने पर दूसरी मक्खियों को भोजन की नयी जगह के बारे में पता चल जाता है। अगर मधु-मक्खी मस्त होकर देर तक नाचती रहे तो यह बढ़िया भोजन का संकेत होता है। पेट हिलाते हुए घूम घूम कर घेरे में नाच का अर्थ है खाना नजदीक ही है। 10 चक्कर लगाने का मतलब है खुराक 100 मीटर की दूरी पर है जबकि 1 चक्कर लगाने पर दूरी 10,000 मीटर समझ ली जाती है। यदि खाना सूर्य की दिशा में होता है तो मधु मक्खी ऊपर की ओर मुख हिलाकर नाच करती है। शहद के छत्ते के विपरीत इसके शरीर का जो कोण होता है उससे उड़ान की दिशा पता चलती है। इस तरह का नाच 'मधुमक्खी स्काउट' भी नये स्थल के मिल जाने पर करती है।

जानवर व पक्षी भले ही बोल नहीं पाते हैं—फिर भी वे एक दूसरे को अपने मन की बातें भली भांति समझा देते हैं।

जीवन बीमा आपके भविष्य को सुरक्षित रखने का सबसे विश्वसनीय तरीका है। इसके बारे में और जानकार हो जाइये।

भारतीय जीवन बीमा निगम

1983 WORLD COMMUNICATIONS YEAR

चाचा चौधरी और
साबू का बूट

Letter Drafting Course

पुरस्कार जीतिए
कॅमल

पहला इनाम (१) रु. १५/-
दूसरा इनाम (३) रु. १०/-
तीसरा इनाम (१०) रु. ५/-
१० प्रमाणपत्र

इस प्रतियोगिता में १२ वर्ष की उम्र तक के बच्चे ही भाग ले सकते हैं. ऊपर दिये हुए चित्र में पूरे तौर से कॅमल कलर्स रंग भरिए और उसे निम्नलिखित पते पर भेज दीजिये :

चंदामामा, पो. बॉ. नं. ९९२८, कुलाबा, बम्बई ४०० ००५.

जजों का निर्णय अंतिम और सभी के लिए मान्य होगा. इस विषय में कोई पत्र-व्यवहार नहीं किया जायेगा.

कृपया कूपन केवल अंग्रेजी में भरिए.

Name: .... Age: ....

Address: ....

....

प्रवेशिकाएं 31-8-1983 से पहले पहले भेजी जायें.

CONTEST NO31

Results of Chandamama—Camlin Colouring Contest No. 29 (Hindi)

1st Prize: Ku. Kalpana Khangan, Bilaspur. *2nd Prize:* Pankaj Madhusudan Chitnis, Dombivli East-421 201. Vinanti Cherian, Dombivli (E). K. Soman Bala Sukhla, Allahabad. *3rd Prize:* Master C. S. Shaoo, Bhubaneshwar-3. Abjijit Ashok Chachad, Thane-400 602. Madhu Balal, Bhawainimandi. Bindoo Kachroo, Kashmir-190 001. Jayendra D. Patoil, Vadodara-4. Master Jay I Vasu, Bombay-400 067. Sanjita Rani Teotia, Meerut. Master Shambhu, New Delhi-110 001. Rajesh Yadava 'Raj', Durg. Rajeev Verma, Meerut Cantt.

LIKE TO FLY INTO THE EXCITING WORLD OF ADVENTURE AND HUMOUR?
DOLTON
SUPER COMICS
CAN TAKE YOU THERE
EVERY FORTNIGHT!
IT COSTS ONLY Rs.2.00 A COPY –
EVIDENTLY THE MOST EASILY
AVAILABLE COMICS MAGAZINE
YOU'VE EVER READ:
ITS 32 FULL COLOUR PAGES TAKE YOU
THROUGH MYSTERY AND EXCITEMENT TO A
RENDEZVOUS WITH THE SUPER HEROES —
SUPERMAN
&
BATMAN
DOLTON COMICS
DC
DOLTON PUBLICATIONS
MADRAS 600 026

चन्दामामा

संचालक : नागिरेड्डी संस्थापक : 'चक्रपाणी'

'चन्दामामा' अब अपना चौतीसवाँ वर्ष पूरा करने जा रहा है। इधर कई वर्षों से पाठक कल्पित बेताल कथाएँ पढ़ते आ रहे हैं। कुछ पाठकों ने मूल कथाओं को पढ़ने की जिज्ञासा प्रकट की। उनकी इच्छा की पूर्ति केलिए "अनोखी शादी" कहानी के साथ इसके पूर्व प्रकाशित कुछ उत्तम कहानियाँ भी इस अंक में पुनः प्रकाशित कर रहे हैं। इस महीने की बेताल कथा का मूल रूप 'पंच विशंशति' से लिया गया है।

अमरवाणी

आलाने गृह्यते हस्ती, वाजी वल्लासु गृह्यते ।
सद्वाक्ये गृह्यते विद्वान, दुष्टो वित्तेषु गृह्यते ॥

[खूँटे से बांध कर हाथी को, लगाम लगा कर घोड़े को, उत्तम वचनों के द्वारा विद्वान को तथा धन से दुष्ट को वश में किया जा सकता है।]

वर्ष: ३५ अगस्त १९८३ अंक: १२

एक प्रति: २-०० :: वार्षिक चन्दा: २४-००

चन्दामामा के समाचार

अगाध सागर में

सनई, १६२२ में फुलोरिडा (अमेरिका) में जो तूफान उठा था, उसने सांटा मार्गरिटा तथा अटोका नामक स्पेन के दो जलपोतों को तहस-नहस कर दिया था। परिणाम स्वरूप ३८० नाविकों के साथ लगभग छः सौ करोड़ डालर क़ीमत का सोना समुद्र में डूब गया। इस घटना के कुछ दिन बाद मेर्लफिशर नामक निधि-अन्वेषक समुद्र के गर्भ से उसके दसवें अंश का सोना बाहर निकाल पाये।

रेगिस्तान में तिमिंगिल

भूगर्भ शास्त्री जियोफ्रे फ्रांक्स सहारा रेगिस्तान में तेल की खोज कर रहे थे जहाँ उन्हें तिमिंगिलों के चिन्ह दिखाई दिये। खुदाई में वहाँ से लगभग चार करोड़ वर्षों के पूर्व से अवस्थित तिमिंगिलों के चिह्न के साथ शिलाओं के रूप में परिवर्तित मगरमच्छ व मछलियों की हड्डियाँ भी निकल आई। इससे पता चलता है तक किसी जमाने में सहारा की गर्भ सिकता के स्थान पर सागर की लहरें हिलारें मारा करती थीं। (अफ्रिका)

क्या आप जानते हैं ?

१. गोवा का प्राचीन नाम क्या है ?
२. आग्रा नगर का यह नाम कैसे पड़ा ?
३. दार्जिलिंग नगर का नाम कैसे पड़ा ?
४. काशी एक ही नगर है, मगर उसके काशी और वाराणसी दो नाम कैसे हुए ?
५. एशिया का सबसे बड़ा गुलाब का बगीचा कहाँ पर है ?
६. दुनिया में सबसे ऊँची जगह पर निर्मित रेलवे स्टेशन का नाम क्या है ?
७. विश्व में संगमरमर से निर्मित सबसे बडी मस्जिद कहाँ पर है ?

३

[पिंगल की मदद से पद्मपाद सरोवर से मगरमच्छ के दो बच्चों को पकड़ कर किनारे पर आ गया। इसके बाद उसने पिंगल को अपना परिचय दिया और उसके साथ भल्लूक पर्वतों तक चलने का अनुरोध किया। उसके पिता के एक वृद्ध गुरु ने महामाय नामक मांत्रिक का जो वृत्तांत उसे सुनाया था, पद्मपाद वही पिंगल को सुनाने लगा।]

भल्लूक पर्वत की घाटी में जो नदी बह रही है, उसके गर्भ में एक उजड़ा हुआ मंदिर है। उस मंदिर में महामाय नामक एक प्रसिद्ध मांत्रिक ने समाधि ली है। उस स्थान पर तीन प्रमुख वस्तुएँ हैं। एक उसके हाथ की अंगूठी है, उसे जो पहनता है, उसे भूगर्भ में स्थित निधियों का पता चल जाता है। दूसरी चीज़ वज्रखचित मूठवाली छुरी है। उस से प्रकट होने वाले अग्निकण बड़े से बड़े शत्रु का भी संहार कर सकते हैं। तीसरी वस्तु सोने से निर्मित भूगोल है। उस भूगोल को प्राप्त करने वाला व्यक्ति उसे घुमाकर जिस देश का चक्रवर्ती बनने का संकल्प करेगा, दूसरे ही क्षण उसकी इच्छा की पूर्ति हो जाती है।

लेकिन महामाय से इन चीज़ों को प्राप्त करना है तो सब से पहले शुक सरोवर में मगर

मच्छ के रूप में स्थित उसके शिष्यों को अपने अधीन में कर लेना होगा। इसके वास्ते पिंगल नामक एक मछुए की मदद की जरूरत पड़ेगी। उसी के द्वारा अंगूठी, छुरी और भूगोल को भी प्राप्त किया जा सकता है। उन तीनों चीज़ों को जो व्यक्ति प्राप्त करेगा, उसी केलिए तुम्हारे पिता के द्वारा छोड़ा गया मंत्र-ग्रंथ उपयोगी सिद्ध होगा।"

हमारे पिता के गुरुजी ने यह वृत्तांत सुनाकर हम तीनों भाइयों की ओर अर्थपूर्ण दृष्टि दौड़ाई। शुक सरोवर में मगर मच्छ के रूप में रहने वाले महामाय के शिष्यों पर अधिकार करने की बात सुनते ही मेरा शरीर रोमांचित हो उठा। महान मांत्रिक महामाय के शिष्यों से जो मगर मच्छ के रूप में जल-गर्भ में छिपे हुए हैं, कैसे सामना किया जाय ?

मेरे दोनों भाई भी मेरे ही जैसे यह वृत्तांत सुनकर चकित रह गये होंगे। गुरुजी हम तीनों को लक्ष्य कर अट्टहास कर उठे, तब हमें चेतावनी देते हुए बोले- "महामाय के शिष्यों को पराजित करने में मछुआरा पिंगल तुम लोगों की मदद कर सकता है। पर इस प्रयत्न में तुम लोग अपने प्राण खो बैठे, तो कोई आश्चर्य की बात न होगी। इसीलिए मैं तुम लोगों को पहले ही सावधान कर देता हूँ।"

हम भाइयों में से सब से पहले मण्डन ने कहा- "मैं इसके लिए तैयार हूँ। मेरे पिताजी अपने पीछे जो मंत्र ग्रंथ छोड़ गये हैं, उन्हे प्राप्त करना मेरे जीवन का लक्ष्य होगा। मेरे पिताजी उन मंत्र-ग्रंथों के पीछे न मालूम अपना कितना समय और शक्ति लगाई होगी। उसे मैं व्यर्थ होने देना नहीं चाहता। वास्तव में उन मंत्र-ग्रंथों में क्या-क्या रहस्य छिपे हुए हैं, उनके द्वारा कैसी सिद्धियां प्राप्त की जा सकती हैं, इन सारी बातों की जानकारी नितांत आवश्यक है। इन सब से बढ़ कर मैं अपने पिता द्वारा छोड़ी गई संपत्ति चाहे वह किसी भी रूप में क्यों न हो, प्राप्त करना चाहता हूँ। इस प्रयत्न में मैं अपने प्राणों को खतरे में डालने केलिए भी

तैयार हूँ ।"

बड़े भाई के मुँह से वे बातें सुनने पर मेरा और अनुरूप का साहस भी बढ़ गया। हमने भी कहा कि हम भी महामाय के शिष्यों के साथ लड़ने केलिए तैयार हैं। इस पर गुरुजी ने हमें बताया कि तुम्हारे द्वारा हाथ-पैर बंधवा कर शुक सरोवर में कूदने के पश्चात क्या क्या करना है !

इस पर पिंगल ने शंका प्रकट की- "तब तो मैं ने अपनी ओर से पूरी मदद पहुँचाई है। मुझे आपने जो आश्वासन दिया था, वह धन दे दो। मैं शीघ्र अपने घर लौट कर अपनी माँ और अपने भाइयों से मिलना चाहता हूँ। मेरी माँ पहले से ही डरी हुई हैं। मेरे लौटने में और ज्यादा दिन लग जायें, तो शायद वह चिंता के मारे अपनी दम तोड़ बैठे ! इसके अलावा मुझे जो कुछ मदद देनी थी, मैं ने दे दी। ऐसी हालत में मुझे भल्लूक पर्वत तक जाने की क्या जरूरत है ?"

यह प्रश्न सुनकर पद्मपाद थोड़ी देर सोचता रहा, फिर पिंगल के कंधे पर प्यार से थप थपा कर बोला- "पिंगल, ऐसा मालूम होता है कि तुम मुझ से डरते हो। विश्वास रखो कि मेरे द्वारा तुम्हारा बड़ा उपकार ही होगा। महामाय जिस भग्न मंदिर में समाधिस्थ हो गया है, उसमें तुम को ही प्रवेश करना होगा। यह काम दूसरों के द्वारा संभव नहीं है।"

"क्या आप शपथ लेकर मुझे इस बात का आश्वासन देंगे कि किसी भी प्रकार से मेरा अहित नहीं होगा ?" पिंगल ने पूछा ।

पद्मपाद ने शपथ ली। पिंगल को अपनी माँ की याद आई। उसने पूछा- "भल्लूक पर्वतों से मैं कितने दिनों में लौट सकता हूँ ?"

"दो महीनों में। इस से अधिक न होगा, पर तुम वहाँ से घर लौटते वक्त इस रूप में न होगे, मैं ने वचन दिया है न कि तुम्हें संसार का सब से बड़ा धनवान बनाऊँगा !" पद्मपाद ने कहा।

"ओह, उस वक्त की बात रहने दीजिए। फिलहाल मेरे हाथ में एक कौड़ी भी नहीं है। मैं

यदि दो महीने घर पर न रहूँगा तो मेरी माँ और मेरे भाइयों का क्या होगा ? वे कैसे जियेंगे ? शायद आप को पता नहीं है, मेरी माँ और मेरे दो बड़े भाई भी मेरी कमाई पर निर्भर हैं। इस वक्त हमारे पास कोई पैतृक संपत्ति भी नहीं है जिस के बल पर घर बैठे हम लोग अपने पेट भर सके। इस कारण मैं ज्यादा दिन आपके साथ बिता नहीं सकूँगा। वे लोग भूखों मर जायेंगे। उनके खाने-पीने की समुचित व्यवस्था हो जाय तो मैं निश्चित होकर आप के साथ अधिक दिन रह सकता हूँ। वरना संभव नहीं है। आप कृपया मुझे क्षमा करें। यह मेरी विवशता है। वैसे मैं आप की सहायता करने केलिए हमेशा तत्पर रहूँगा, पर अपनी जिम्मेदारी को भी मुझे निभाना होगा।" पिंगल ने पूछा।

पद्मपाद घोड़े पर लटकने वाली थैली में से एक हज़ार मोहरें निकाल कर पिंगल के हाथ देते हुए बोला- "यह धन तुम अपनी माँ के हाथ दे दो। तुम्हारी ख़ैरियत के बारे में उन को चिंता करने की कोई ज़रूरत नहीं है। कल इसी वक्त तुम मुझ से यहाँ पर मिलो। समझें।"

पिंगल पद्मपाद से धन लेकर अत्यंत आनंद के साथ घर पहुँचा। उस वक्त उसके भाई घर पर नहीं थे। उसकी माता उसका इंतज़ार कर रही थी। पिंगल ने एक हज़ार अशर्फ़ियाँ अपनी माँ के आगे डाल दीं, उस धन को देख वह कांप उठी- "पिंगल, इतना धन तुम्हें कैसे प्राप्त हुआ ? मुझे तो न मालूम क्यों, डर

लगता है !" माँ बोली ।

पिंगल ने सारी कहानी सुनाई । इसके बाद अपनी माँ को हिम्मत बंधाते हुए समझाया कि वह दो महीने में सकुशल घर लौट आएगा । उसके बारे में चिंता करने की कोई आवश्यकता नहीं है ।

"बेटा, मांत्रिकों की उपकार बुद्धि पर मेरा विश्वास नहीं है । तुम बताते हो कि पद्मपाद उनसे भिन्न स्वभाव का है । तुम ईश्वर की कृपा से किसी प्रकार के कष्ट भोगे बिना भल्लूक पर्वतों से सकुशल घर लौट आओ ! मैं तीस करोड़ देवताओं से यही प्रार्थना किया करूँगी ।" माँ ने कहा ।

दूसरे दिन निश्चित समय पर पिंगल शुक सरोवर के पास पहुँचा । सरोवर के तट पर पद्मपाद अकेला बैठा हुआ था । उसकी बगल में एक थैली थी, पर घोड़ा या अन्य कोई सवारी न थी ।

पिंगल ने उसके समीप जाकर पूछा- "पद्मपाद, यहाँ पर कोई सवारी नही है । क्या हमें पैदल यात्रा करनी है ?"

"पैदल यात्रा ? यह तो असंभव है । भल्लूक पर्वतों तक पहुँचने केलिए हमें दो-तीन सौ मीलों की यात्रा तय करनी पाड़ेगी । इस यात्रा में साधारण घोड़े काम नहीं देते । अब केवल दो दिनों में एक पर्व पड़ने वाला है । उस दिन तक हमें भल्लूक पर्वतों के पास पहुँचना होगा ! लो, देखो, हमारे वाहन ये हैं ।" यों कह

कर पद्मपाद ने चुटकी भर मिट्टी ली और मंत्र पढ़कर जमीन पर छिड़क दी ।

दूसरे ही क्षण प्रलयंकारी गर्जन के साथ पृथ्वी फट गई । उसके भीतर से सर उठाये कर्कशता के साथ रेंकते दो गधे बाहर कूद पड़े । पद्मपाद ने एक गधे की पीठ पर धन की थैली लटका दी और उस पर बैठ गया, पिंगल भय कंपित हो जड़वत दूसरे गधे की ओर देखते खड़ा रह गया । उसकी समझ में नहीं आया कि अब उसका कर्तव्य क्या है ?

तभी पद्मपाद बोला- "पिंगल, यह तुम्हारा वाहन है । उस पर सवार हो जाओ । हमारी मंजिल बड़ी दूर है । देरी मत करो,अब हम चल पड़ेंगे ।"

पिंगल ने कहा- "ये तो साधारण गधे नहीं हैं । पिशाच जैसे लगते हैं । मुझे तो डर लगता है !"

"ये साधारण गधे नहीं हैं, यह सच है । पर ये पिशाच क्यों न हो, फिर भी हमारे आदेशों का पालन करते हैं । वायु वेग के साथ यात्रा कर सकते हैं । मैं तुम्हारे साथ हूँ । इसलिए तुम्हें डरने की कोई आवश्यकता नहीं है ।" पद्मपाद ने समझाया ।

ये बातें सुनते ही पिंगल के मन में हिम्मत पैदा हो गई । वह निर्भयता पूर्वक गधे पर जा बैठा । दूसरे ही पल दोनों गधे जोर से रेंकते थोड़ी देर वायु में, फिर थोड़ी देर के लिए पृथ्वी पर भी दौड़ने लगे ।

संध्या के समय तक वे एक जंगल के समीप पहुँचे । पद्मपाद गधे से उतरते हुए बोला- "पिंगल, आज रात को हम यहीं पर विश्राम करेंगे । शेष यात्रा कल शाम तक पूरी कर सकते हैं ।"

पिंगल थक कर चूर हो गया था, इसलिए उसने झट मान लिया ।

हरी घास पर थोड़ी देर विश्राम करने के बाद पिंगल के मन में स्नान करने की इच्छा हुई । लेकिन उस प्रदेश में कहीं पानी का निशान तक न दिखाई दिया । उसने पद्मपाद से पूछा ।

इस पर पद्मपाद ने जंगल की ओर इशारा करते हुए कहा- "अमुक जगह पर एक सरोवर है। उस प्रदेश में किसी से डरने की जरूरत नहीं हैं।

पिंगल जंगल की ओर चल पड़ा। पर उसकी समझ में यह बात नहीं आई कि पद्मपाद ने, किसी से डरने की जरूरत नहीं है, क्यों कहा है ? वह बड़ी सतर्कता के साथ पेड़ों के नीचे से चल कर थोड़ी देर में सरोवर के निकट पहुँचा। उस सरोवर का निर्मल जल देख वह आनंद से भर उठा। वह उत्साह पूर्वक सरोवर में उतरने को हुआ। इतने में उस प्रदेश को गुंजाते हुए एक भीकर स्वर सुनाई दिया- "मुझे... बंधन मुक्त कर दो। मैं तुम्हारी मदद करूँगा। मुझे..."

उस ध्वनि को सुनकर पिंगल चौंक पड़ा। उसकी दृष्टि ध्वनि की दिशा की ओर गई। सरोवर के किनारे एक स्थान पर दो भारी शिलाओं से बांधी हुई एक काली विकृत आकृति उसे दिखाई दी। पिंगल एक दम कांप उठा। उसने पीछे मुड़ कर भागना चाहा, पर तुरंत उसे यह बात याद हो आई कि वह शक्तिशाली विकृत आकृति शिलाओं से बंधी हुई है और वह जहाँ का तहाँ खड़ा रह गया।

"प्रभु, मेरे हाथों में बंधी इन भारी जंजीरों को तोड़कर मेरी रक्षा कीजिए। इस के बदले

में आप मुझ से जो भी सहायता चाहेंगे, करने केलिए मैं तैयार रहूँगा।" यों कह कर विकृत आकृति वाला पिंगल की ओर मुड़कर चिल्लाने लगा।

अब तक पिंगल की हिम्मत बंध गई थी। वह फूँक-फूँक कर कदम रखते हुए उस विकृत आकृति के समीप पहुँचा। निकट से देखने पर वह व्यक्ति और अधिक भयंकर प्रतीत हुआ। ताड़ के मूल जैसे पैर, जंगली भैंसे के जैसे रोएं, हाथी के कान जैसे विशाल कान, अग्निकण बिखरने वाले नेत्र देख कर पिंगल भय कंपित हो गया।

"प्रभु, मेरी रक्षा कीजिए। मैं हर प्रकार की

सहायता कर सकता हूँ। इन तीनों लोकों में कहीं भी आप को मेरे कंधों पर उठाकर ले जा सकता हूँ।" विकृत आकृति वाले ने कहा।

ये बातें सुन कर पिंगल हंस पड़ा और बोला- "तीनों लोकों में नहीं, बल्कि चौदहों भुवनों में ले जा सकने वाला एक गधा मेरे पास है। तुम तो उस गधे से भी ज्यादा बुद्धिमान और बलवान लगते हो। तुम्हारा नाम क्या है?"

"मेरा नाम भल्लूक केतु है।" विकृत आकृति वाले ने विनय पूर्वक उत्तर दिया।

"यहीं समीप में स्थित भल्लूक पर्वतों के बारे में तुम जानते हो?" पिंगल ने पूछा।

"भल्लूक पर्वतों का समाचार! ओह।" यों कहते भल्लूक केतु विकृत रूप में अट्टहास कर उठा, फिर बोला- "किसी समय मैं उन भल्लूक पर्वतों का अधिपति था। एक मांत्रिक की वजह से मेरी यह दुर्दशा हो गई है। आप अगर मुझे बंधन मुक्त करेंगे तो मैं उन पर्वतों में निक्षिप्त सारी संपदाएँ आपको सौप दूँगा।"

भल्लूक केतु के मुँह से यह बात सुनते ही पिंगल के मन में लोभ जाग्रत हुआ। उस ने सोचा कि भल्लूक केतु की मदद से भल्लूक पर्वतों की सारी सम्पदा को अपने वश में कर सकते हैं। चाहे तो पद्मपाद को भी उस में हिस्सा दे सकते हैं!

"तब तो मैं तुम को इन बंधनों से मुक्त कर सकता हूँ। लेकिन इस बात का क्या भरोसा है कि तुम किसी प्रकार से मेरी हानि न करोगे?" पिंगल ने शंका प्रकट की।

भल्लूक केतु आशा भरी दृष्टि से पिंगल की ओर देखते हुए बोला- "स्वामि! मैं पहले से ही इस शाप का शिकार हो गया हूँ कि अपना वचन भंग करने पर मेरा सर फट जाएगा। आप को वचन देने के बाद यदि मैं मरने के लिए तैयार हो जाऊँगा तभी मैं अपना वचन तोड़ सकता हूँ। अन्यथा उस के विरुद्ध मैं व्यवहार नहीं कर सकता।"

भल्लूक केतु की बातों पर पिंगल का विश्वास जम गया। वह सरोवर के तट पर से एक पत्थर लेकर आगे बढ़ने को हुआ। इतने में पीछे से पद्मपाद जोर से पुकार उठा- "पिंगल रुक जाओ!"

अनोखी शादी

दृढ़व्रती विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आये, पेड़ पर से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगे, तब शव में स्थित बेताल ने कहा-"राजन, आप के अनेक नौकर-चाकर हैं। आप की सेवा में सदा वे तत्पर रहते हैं। फिर भी आप उनसे काम लिये बिना आधी रात के वक्त आप यह जो श्रम उठा रहे हैं, इसे देख मुझे बड़ा दुख हो रहा है! आप की इस थकावट को दूर करने केलिए मैं आप को एक विचित्र कहानी सुनाता हूँ। सुनियेः

भगवान ने श्रीरामचन्द्र का अवतार लेकर जिस अयोध्या पर शासन किया था, उस पर एक जमाने में महाराजा वीरकेतु ने भी राज्य किया था। उनके शासन काल में प्रति दिन अत्यंत चित्र-विचित्र चोरियाँ हुआ करती थीं। जनता उन चोरियों व डकैतियों से तंग आ गई।

वेताल कथाएँ

आख़िर राजा के पास जाकर निवेदन किया- "महाराज, इन डाकुओं से हमारी रक्षा कीजिए। हमने चोरों का पता लगाने की बड़ी कोशिश की, लेकिन हम अपने प्रयत्न में असफल हो गये हैं। उनका सुराग लगना तो दूर, उल्टे वे जनता की आँखों में धूल झोंक कर अत्यंत साहसिक कार्य करते जा रहे हैं! महाराज, आप विश्वास कीजिए। इन चोरों के कारण हमारी नींद हराम हो गई। दिन-रात इन चोरों के डर से परेशान हो हम लोग जो यातनाएँ झेल रहे हैं, उनका बयान तक नहीं कर सकते! अब आप ही के भरोसे पर विश्वास करके आप की शरण में आये हुए हैं। हमारी रक्षा कीजिए।"

राजा ने जनता को समझा-बुझाकर भेज दिया। उन्हें सचमुच जनता की यातनाओं का समाचार सुनने पर बड़ा दुख हुआ। उन्हों ने अपने मन में दृढ़ निश्चय कर लिया कि किसी उपाय से जनता को चोरों के अत्याचारों से बचाना चाहिए। इसके बाद अपने सैनिकों को वेष बदल कर रात के वक्त पहरा देने का आदेश दिया। सैनिक चौकन्ने हो रातों में पहरा देते रहें, फिर भी बराबर चोरियाँ होती रहीं। एक भी चोर सैनिकों की आँखों में न पड़ा।

राजा आख़िर इस निर्णय पर पहुँचे कि चोर बड़े ही प्रवीण हैं। तब वे स्वयं चोरों को पकड़ने केलिए चल पड़े। रात के वक्त वेष बदल कर राजा अंधेरे में चले जा रहे थे कि उन्हें एक स्थान पर विचित्र ढंग से व्यवहार करने वाला एक व्यक्ति दिखाई दिया। राजा के मन में यह संदेह पैदा हुआ कि यह आदमी जरूर चोर होगा! इस के पीछे चलकर पता लगाना चाहिए कि आख़िर यह इस रात के वक्त क्यों इधर-उधर भटक रहा है। यह सोच कर राजा इसी ओर चल पड़े। अपनी तरफ़ बढ़ने वाले व्यक्ति से चोर ने पूछा- "तुम कौन हो?" राजा ने जवाब दिया- "मैं एक चोर हूँ।"

"तो तुम मेरे ही धंधे के आदमी हो, चलो मेरे घर। मैं तुम्हारा स्नेह-सत्कार करूँगा।" उस व्यक्ति ने कहा।

राजा उसके पीछे चल पड़े। उसका घर जंगल में भूगर्भ-निर्मित था। चोर ने राजा को एक कमरे में ले जाकर बिठा दिया और यह कह कर दूसरे कमरे में चला गया- "सुनो, मैं अभी आता हूँ।"

उसी समय एक दासी आ पहुँची और बोली- "बेटा, तुम कौन हो ? यहाँ पर जो भी आता है, वह जीवित नहीं लौटता। तुम यहाँ से जल्दी भाग जाओ। इसी में तुम्हारी ख़ैरियत है। इस दुष्ट के बारे में इस वक्त मैं इस से ज्यादा कुछ कह नहीं सकती।"

राजा तुरंत वहाँ से अपने नगर को चले गये और सशस्त्र सैनिकों को साथ ले पुनः वहाँ पर लौट आये। डाकू और सैनिकों के बीच भयंकर युद्ध हुआ। डाकू अकेला हो कर भी देर तक अनेक राज भटों के साथ लड़ता रहा, आखिर वह राजा के हाथों में वन्दी बना लिया गया। रजा वीरकेतु चोर को राजधानी में ले आये।

उसकी सुनवाई हुई। अंत में यह साबित हुआ कि उसने पिछले कई वर्षों में अयोध्या नगर में कितनी ही चोरियाँ व डकैतियाँ की हैं। चोरी का सारा माल उसके घर से बरामद भी हुआ।

राजा ने चोर को सूली पर चढ़ाने का आदेश दिया।

चोर को फाँसी के तख़्ते पर चढ़ाने केलिए राज भट राजधानी के बाहर ले जा रहे थे। उस वक्त अयोध्या नगर के धनी वैश्य श्रेष्ठ रत्नदत्त की पुत्री रत्नवती उस चोर को देख अपने पिता को बुलवाया और कहा- "पिताजी, आप मेरी शादी इस के साथ कर दीजिए।"

ये बातें सुन रत्नदत्त चकित रह गया। विवाह के बहुत समय बाद व्यापारी के घर रत्नवती पैदा हुई थी। रत्नदत्त ने बड़े ही लाड़-प्यार से उसका पालन-पोषण किया था। अलावा इसके रत्नवती अत्यंत रूपवती भी थी। इस कारण कई करोड़पतियों के पुत्र उसके साथ विवाह करने को लालायित थे। रत्नवती ने उन सब

को अस्वीकार कर दिया था तथा अविवाहित रहने का निर्णय कर लिया था ।

पर रत्नदत्त समझ नहीं पाया कि उसकी बेटी कई सुंदर और धनी परिवार के युवकों के साथ शादी करने से अस्वीकार क्यों करती है । रत्नवती उसकी इकलौती बेटी थी । इसहिए रत्नदत्त अपनी बेटी का विवाह एक सुंदर और संपन्न परिवार के युवक के साथ करके अपने कर्तव्य से मुक्त हो जाय । इसलिए उसने ये ही बातें सोच कर समझाया —

"बेटी, तुम राजपरिवारों के युवकों के साथ विवाह करने से इनकार करके आख़िर इस लुटेरे के साथ विवाह करना क्यों चाहती हो ? उसको फांसी पर लटकाने केलिए सिपाही लिए जा रहे हैं !" रत्नदत्त ने कहा ।

रत्नवती ने अपने पिता की बातों पर कोई ध्यान न दिया । कई राजकुमार रत्नवती के साथ विवाह करने केलिए आये, उस वक्त रत्नदत्त ने उसे सलाह दी कि वह उन राजकुमारों में से किसी एक का वरण कर ले । लेकिन उस समय भी रत्नवती ने अपने पिता की सलाह की परवाह न की ।

"चाहे वह चोर क्यों न हो और उसको चन्द मिनटों में फांसी के तख्ते पर क्यों न चढ़ाया जा रहा हो, मैं ने उसी को अपने पति के रूप में वर लिया है । यदि आप मेरा विवाह करना चाहते हैं तो उसी के साथ करें, यदि आप ऐसा नहीं कर पाये तो मैं भी उसी के साथ प्राण दे दूँगी । पर किसी भी हालत में मैं अपने निर्णय को बदल नहीं सकती ।" रत्नवती ने साफ़ कह
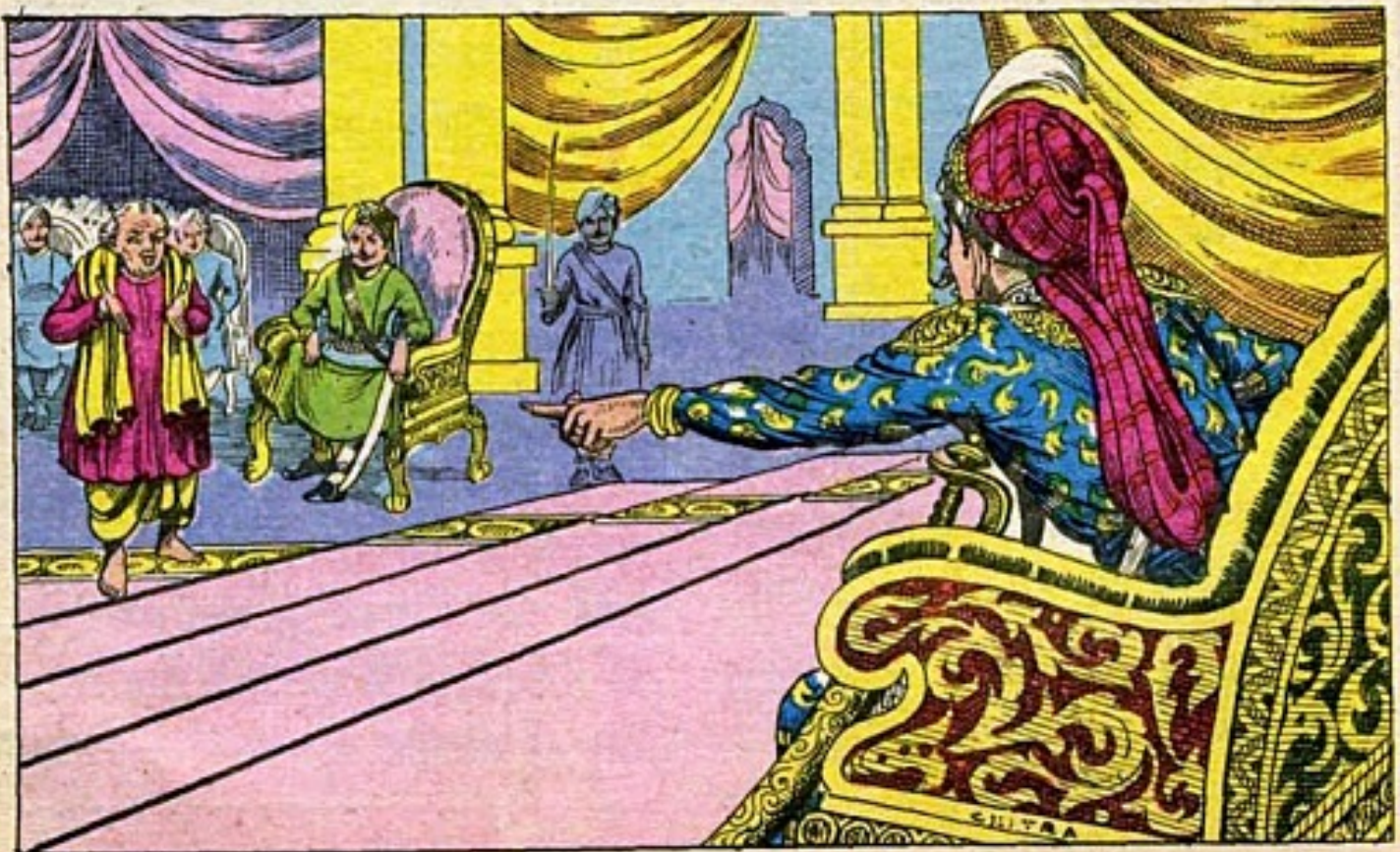
दिया ।

रत्नवती का उत्तर सुनकर रत्नदत्त घबरा उठा । उसे स्पष्ट मालूम हो गया कि उस की पुत्री अपने निर्णय पर अटल रहेगी । इस पर वह राजा वीरकेतु के पास पहुँचा और निवेदन किया- "महाराज, आज आपने जिस डाकू को पकड़ा, उसको मेरे हाथ सौंप दीजिए । मैं इसके बद्‌ले अपनी सौ करोड़ रुपयों की संपत्ति आप को दूँगा ।" लेकिन राजा नहीं माना । अयोध्या नगर को अनेक वर्षों तक कम्पित कर देने वाले उस डाकू को मुक्त करने केलिए राजा का मन न माना । इस पर हताश हो रत्नदत्त घर लौट आया, उसने देखा कि उसकी बेटी रत्नवती दुलहन बनकर तैयार बैठी है ।

"बेटी, मेरा प्रयत्न सफल नहीं हुआ । राजा डाकू को मुक्त करने केलिए तैयार नहीं हैं । मैं ने अपनी सारी संपत्ति सौंपने का वचन दिया, पर व्यर्थ । अब तुम्हारा विवाह असंभव है !" रत्नदत्त ने उदास भरे स्वर में उत्तर दिया ।

"उसके साथ मेरी शादी न हुई तो मैं सहगमन करूँगी ।" रत्नवती ने कहा ।

इसके बाद वह पालकी पर सवार हो वधस्थल पर पहुँची । उस के साथ उसके माता-पिता भी चल पड़े । पर उनके पहुँचने के पहले ही वधिकों ने डाकू को फांसी दे दी थी । वह अंतिम सांस ले रहा था ।

रत्नदत्त अपनी बेटी को डाकू के पास ले जाकर बोला- " बेटा, देखो, मेरी बेटी तुम्हारे साथ विवाह करने केलिए जिद कर रही है ।" रत्नदत्त की बातें सुनने पर डाकू की आँखों में

आँसू आ गये, फिर उसने मंदहास करके अपने प्राण त्याग दिये ।

रत्नवती डाकू के शव को लेकर श्मशान में पहुँची और डाकू के साथ वह भी चिता पर चढ़ गई। रत्नवती की पतिभक्ति पर प्रसन्न हो काल भैरव प्रकट हुए और बोले- "बेटी, तुम्हारी पतिभक्ति अपूर्व है। तुम कोई वर मांगो, मैं तुम से प्रसन्न हूँ ।"

"देव, मैं अपने माता-पिता की एक मात्र संतान हूँ। मेरे मरने के बाद वे मेरी चिंता में तड़प-तड़प कर प्राण तोड़ देंगे। उन्हें कृपया पुत्र प्रदान कीजिए। उनकी परवरिश करते हुए वे मुझे भूल जायेंगे।" रत्नवती ने कहा ।

काल भैरव ने मुस्कुरा कर कहा- "मैं तुम्हारी इच्छा की पूर्ति करूँगा। पर क्या तुम अपने लिए कोई वर न मांगोगी ?"

"मेरी सिर्फ़ एक ही इच्छा है, वह है- सदा अपने पति के साथ रहने की !" रत्नवती ने उत्तर दिया ।

"मैं तुम्हारी इस इच्छा की भी पूर्ति करूँगा।" यह कह कर काल भैरव ने डाकू को जीवित कर दिया और अंतर्धान हो गये। रत्नदत्त डाकू को अपने घर ले आया और उसके साथ अपनी बेटी का विवाह धूमधाम से कर दिया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा- "राजन, फांसी की सज़ा पाकर मरते वक्त डाकू को जब यह मालूम हुआ कि रत्नवती उसके साथ शादी करना चाहती है, तब वह पहले क्यों रो पड़ा और फिर क्यों मुस्कुराया ? इसका सही समाधान न दोगे तो तुम्हारा सर फट कर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा ।"

"डाकू पहले यह सोच कर रोया कि अकारण ही उसके साथ प्यार करने वाले आत्मीय बंधुओं का ऋण चुकाये बिना ही मर रहा हूँ लेकिन बाद को वह इसलिए हंस पड़ा कि कई राजकुमारों तथा करोडपति युवकों के साथ विवाह करने से रत्नवती ने इनकार करके उसको वर लिया है।" विक्रमार्क ने उत्तर दिया।

इस प्रकार राजा के मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा।

सच्चा सपना

प्राचीन काल में इन्द्रप्रस्थ नगर में एक धनी रहा करता था। उसके दिन सुख पूर्वक बीत रहे थे। पर दिन सदा एक से नहीं होते। समय के बदलने के साथ उसकी क़िस्मत भी बदल गई और वह अपनी सारी संपत्ति खो बैठा। परिणाम स्वरूप वह एक दम निर्धन बन गया।

एक दिन रात को उसने एक सपना देखा। उस सपने में श्री महाविष्णु ने उसे दर्शन देकर कहा- "तुम इसी वक्त पाटलिपुत्र केलिए रवाना हो जाओ। वहाँ पर तुम्हें पर्याप्त धन प्राप्त होगा। तुम फिर से अपने दिन सुख पूर्वक बिता सकते हो!"

श्री महाविष्णु ने सपने में जो बातें कहीं, उन पर उस गरीब का विश्वास जम गया। वह अकेले कई दिन तक पैदल यात्रा करके आख़िर पाटलिपुत्र नगर में पहुँचा। वह उस नगर केलिए एक दम नया था। साथ ही उसके नगर में पहुँचते-पहुँचते अंधेरा फैल गया था। अमावास्या का दिन निकट था। इसलिए आसमान में कहीं चन्द्रमा का भी पता न था।

वह किसी तरह एक मंदिर में पहुँचा। मंदिर के मण्डप में लेट कर थोड़ी ही देर में सो गया। सारा नगर सुनसान था। आधी रात के क़रीब उस मंदिर के समीप वाले मकान में चोर घुस आये। उस धर का मालिक चोरों की आहट पाकर जाग पड़ा और जोर से चिल्ला उठा- "चोर! चोर! पकड़ो।" उसकी आवाज़ सुनकर अड़ोस-पड़ोस के लोग दौड़े आ पहुँचे।

चोर घबरा गये। वे उस मकान की दीवार लांघकर मंदिर के अहाते में पहुँचे और मण्डप की ओर से भाग खड़े हुए। थोड़ी ही देर में चोर

रामचन्द्र वर्मा

उस अंधेरे में गायब हो गये। उसका पीछा करने वाले लोग मंदिर में दौड़े आये। सारे अहाते में चोरों को ढूँढा, आखिर मंदिर के मण्डप में बेखटके सोने वाले मुसाफ़िर को पकड़ लिया और उसको बन्दी बना कर नगर रक्षक के पास खींच ले गये। दूर की यात्रा करने के कारण उस यात्री-के कपड़े मैले हो गये थे। इसलिए वह बुजुर्ग आदमी नगर रक्षक को चोर जैसा लगा। उसने अपने सिपाहियों के द्वारा यात्री को खूब पिटवाया और पूछा- "सच बताओ, तुम कौन हो ? तुम किसलिए चोरी करने आये ?"

"हुजूर, मैं कोई चोर नहीं हूँ। मैं इन्द्रप्रस्थ नगर का निवासी हूँ। एक जमाने में मैं भी सुखी-संपन्न था। पर भगवान ने मुझे दो बार धोखा दिया है। एक बार उन्होंने मेरी सारी संपत्ति छीन ली। इस से वे संतुष्ट नहीं हुए। उन्होंने मुझे सपने में दर्शन देकर कहा कि तुम पाटलिपुत्र जाओ। वहाँ पर तुम्हें काफी धन मिलेगा। उनकी बातों पर विश्वास करके कई यातनाएँ झेल कर मैं इन्द्रप्रस्थ से यहाँ तक पैदल चला आया और आज ही रात को यहाँ पर पहुँचा। मेरे यहाँ आये चार घड़ियाँ भी नहीं बीतीं कि आप लोगों के हाथों में मुझे मार खानी पड़ी।" यात्री ने कहा।

यात्री की तातें सुनकर नगर रक्षक हंस पड़ा और बोला- "अरे पगले, क्या सपनों पर भी विश्वास करते हैं ? कुछ दिन पहले मुझे भी श्री महाविष्णु ने सपने में दर्शन देकर बताया कि इन्द्रप्रस्थ में अमुक मकान के पीछे अमुक पेड़ के नीचे खोदोगे तो तुम्हें बहुत सा धन हाथ लगेगा। पर उनकी बातों पर विश्वास करके मैं इन्द्रप्रस्थ नहीं गया। इसलिए तुम भी ऐसी बेमतलब की बातों पर विश्वास करना छोड़ कर अभी इन्द्रप्रस्थ को लौट जाओ।"

उसकी सलाह मानकर वह यात्री उसी वक्त इन्द्रप्रस्थ केलिए रवाना हुआ। नगर रक्षक के कहे मुताबिक उसने एक पेड़ के नीचे खोदा, उस में से सचमुच काफी धन मिला। इस पर वह फिर धनवान बन गया। वह फिर सुखी बन गया। इस तरह उसका सपना सच निकला।

मुर्गी का मूल्य

एक गाँव में कृपाशंकर नामक एक कुम्हार निवास करता था। संक्रांति पर्व निकट आया जानकर उसकी पत्नी ने कृपाशंकर को एक मुर्गी ख़रीद लाने भेजा। उस गाँव का सब से बड़ा काश्तकार अनूपसिंह था। अनूपसिंह के घर जाकर कृपाशंकर ने एक मुर्गी खरीदने की इच्छा प्रकट की।

अनूपसिंह ने कृपाशंकर के हाथ एक मुर्गी पकड़ा कर समझाया- "सुनो, अगर इस वक्त तुम्हारे हाथ खाली हैं, तो चिंता मत करो। तुम्हारे हाथ जब पैसे आयें तभी देना। मैं हिसाब लिख कर रख दूँगा।" कृपाशंकर के प्रति आज तक किसी ने भी सहानुभूति नहीं दिखाई थी। इसलिए देर तक उसकी उदारता की तारीफ़ करके अनूप अपने घर लौट आया।

दूसरे ही दिन कृपाशंकर और उसकी पत्नी ने मुर्गी को बना कर खा लिया। कुछ दिन बाद कृपाशंकर अनूपसिंह को मुर्गी का मूल्य चुकाने उसके घर पहुँचा।

"भाई, इस वक्त मैं एक जरूरी काम में फँसा हुआ हूँ। मुर्गी का हिसाब देखने में काफी समय लग सकता है। इसलिए तुम फिर किसी दिन आ जाओ।" अनूपसिंह ने कहा।

"अभी मुर्गी का मूल्य लेने में कितनी देर लगती है ? इस में हिसाब देखने की क्या ज़रूरत है ? बताइये, कितने रुपये देने है ? मैं अभी उसका मूल्य चुका कर अपने रास्ते चलता बनूँगा।" कृपाशंकर ने कहा।

"उफ़ ! तुम जानते ही क्या हो ? उसका हिसाब तो दो-चार मिनटों में लगाया नहीं जा सकता। अभी तुम चले जाओ, फिर कभी देखा जाएगा।" यों समझा कर अनूपसिंह ने कृपाशंकर को घर भेज दिया।

इसके बाद कृपाशंकर तीन-चार बार मुर्गी का मूल्य चुकाने अनूपसिंह के घर गया। उसे बार-बार यही उत्तर मिलता रहा। आखिर एक

सुधा जैन

दिन अनूपसिंह क़लम और कागज़ ले आया, घंटे भर हिसाब करके बोला- "तुम्हारी मुर्गी का मूल्य कुल मिला कर ढाई सौ रुपये और कुछ पैसे लगते हैं। छुट्टे पैसे देने की जरूरत नहीं है। तुम ठीक ढाई सौ रुपये दे दो। मैं तुम्हारा हिसाब अभी काट देता हूँ।"

मुर्गी का मूल्य ढाई सौ रुपये की बात सुनते ही कृपाशंकर अवाक् रह गया।

"महाशय, एक मुर्गी का मूल्य ढाई सौ रुपये हैं? मैं ने तो कभी कहीं सुना तक नहीं है कि मुर्गी का मूल्य इतना ज्यादा हो सकता है। कहीं वह सोने की मुर्गी थोड़े ही थी?" कृपाशंकर ने तैश में आकर उलटा सवाल किया।

"मेरे हिसाब में कोई गड़बड़ नहीं है। चाहे तो तुम किसी के पास यह किताब ले जाकर हिसाब लगवा लो। तुम ने जो मुर्गी ख़रीदी, वह अब तक कितने अण्डे देती, वे अण्डे चूज़े बन कर मुर्गी देते? उन सब का मूल्य तुमको चुकाना पड़ेगा। समझें!" अनूपसिंह ने कहा।

यह जवाब सुनने पर कृपाशंकर के आश्चर्य की कोई सीमा न रही। उसने कहा- "इस का हिसाब मुखिया साहब के सामने लगवाये बिना मैं आप को एक कौड़ी भी न दूँगा।"

"कोई बात नहीं। मैं थोड़े ही मना करता हूँ?" अनूपसिंह ने इस ख्याल से हिम्मत के साथ जवाब दिया कि मुखिया साहब उसीके अनुकूल फैसला सुनायेंगे!

इसके बाद वे दोनों मुखिया के पास पहुँचे, अनूपसिंह ने मुखिये से कहा- "मुखिया साहब, आप कृपया हमारा इन्साफ़ कीजिए! इस ने

से गवाही दूँगा।" पटवारी ने कृपाशंकर को समझाया ।

कृपाशंकर ने अनूपसिंह के घर जाकर यह बात बता दी। अनूपसिंह ने गुस्से में आकर कहा- "चौपाल का फ़ैसला क्या है ! मुखिया साहब ने फैसला सुनाया है न ?"

"मेरी समझ में आपका और मुखिया साहब का हिसाब न आया। चौपाल के पास सब लोग जो हिसाब बतायेंगे, वही मूल्य मैं चुका दूँगा। पटवारी साहब ने मेरी ओर से गवाही देने को मान लिया है ! पटवारी साऊब से आप डरते तो नहीं हैं न ?" कृपाशंकर ने कहा।

"मुझे उनसे डर किस बात का है ?" यों कह कर चौपाल के फैसले को मानने की अनूपसिंह ने अपनी सहमति दी ।

दूसरे दिन चौपाल के पास सब लोग जमा हुए। पर पटवारी का कहीं पता न था। कृपाशंकर शंका करने लगा कि पटवारी ने उसके साथ दगा किया है। सब लोग कृपा शंकर के मुँह पर हंसने लगे। आखिर सूर्यास्त के समय पटवारी साहब चौपाल के पास आ पहुँचा ।

"मेरे आने में थोडी देर ज़रूर हो गई है। बात यह है कि मजदूरों ने आज चकल बनाने पर जोर दिया। मुझे बीस पंसेरी धान तवों पर भुनवाना पड़ा। वह काम पूरा करके अभी वहाँ से लौट रहा हूँ।" पटवारी ने देरी से पहुँचने की सफ़ाई दी ।

"चकल बनाने वाले बीज़ों को भुनाना कैसा ? फटवारी साहब कहीं भुनाये गये बीजों से अंकुर फूटते हैं ? आप यह क्या कह रहे हैं ?" मुखिया ने पटवारी साहब का मजाक़ उड़ाया ।

"उफ, बात यह है ! मैं ने सोचा था कि कृपाशंकर ने जिस मुर्गी को पिछले साल संक्रांति पर्व के दिन खा लिया था, वह अगर अण्डे दे सकती है तो भुनाये गये बीजों से भी अंकुर फूट सकते हैं।" पटवारी ने ताने दिये।

इस पर सब लोग खिल-खिला कर हंस पड़े। अपमानित हो मुखिया साहब उस अंधेरे में चुपके से खिसक गये। इसके बाद अनूपसिंह ने फिर कभी कृपाशंकर के सामने मुर्गी का मूल्य चुकाने की बात नहीं उठाई ।

नरक वासी

काशी राज्य पर राजा ब्रह्मदत्त शासन कर रहे थे। उसके मित्रविंद नामक एक पुत्र था। मित्रविंद बड़ा पापी था। धनी व्यापारी का अल्प आयु में ही देहांत हो गया। इस पर उसकी पत्नी ने अपने पुत्र मित्रविंद को बुला कर समझाया- "बेटा, तुम दान-धर्म किया करो। नियमों का पालन करो। धर्म मार्ग का अनुसरण करो ! अपने माँ-बाप का नाम रोशन करो" पर मित्रविंद ने अपनी माता की बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया।

इस बीच कार्तिक पूर्णिमा का पर्व आ पड़ा। मित्रविंद को उसकी माँ ने समझाया- "बेटा ? आज पुण्य पर्व का दिन है। रात भर विहारों में धर्म का उपदेश करते हैं। तुम वहाँ पर जाओ। सब के साथ मिल कर पूजा करो। उपदेश सुनकर लौट आओ। तुम्हें मैं एक हज़ार मुद्राएँ दूँगी।"

धन के लोभ में आकर मित्रविंद ने माता की बात मान ली। उपदेश सुनने केलिए वह विहार में तो पहुँचा, पर एक कोने में लेट कर सो गया। सवेरा होते ही हाथ-मुँह धोकर सीधे घर चला आया ! माता ने सोचा कि उसका पुत्र धर्म प्रचारक को साथ लेकर घर लौटेगा। इस विचार से उसने दोनों केलिए रसोई बनाई। लेकिन अपने पुत्र को अकेले घर लौटे देख माता ने पूछा- "बेटा, तुम धर्म-प्रचारक को अपने साथ क्यों नहीं ले आये ?"

"माँ, उनको यहाँ पर लाने की क्या आवश्यकता है ? उनके साथ मेरा क्या काम है ?" मित्रविंद ने उत्तर दिया।

इसके बाद मित्रविंद खाना खाकर माता से एक हज़ार मुद्राएँ लेकर धर से निकल गया। उस धन को अपनी पूँजी बनाकर मित्रविंद ने कोई व्यापार प्रारंभ किया और कुछ ही दिनों में उसने बीस लाख मुद्राएँ कमा लीं।

उस धन से मित्रविंद संतुष्ट नहीं हुआ। उस

जगदीश शर्मा

ने अपने मन में सोचा- "मैं इस धन को पूँजी बनाकर समुद्री व्यापार करूँगा। इस से कई गुना अधिक धन कमाऊँगा !" इस विचार से उसने एक नाव खरीद ली। माल खरीद कर नाव पर लदवा दिया, तब समुद्री व्यापार का समाचार सुना कर अपनी माता से अनुमति लेने केलिए घर पहुँचा।

माता ने अपने पुत्र के मुँह से सारा वृत्तांत सुनकर आँखों में आँसू भर लिये और बोली- "बेटा, तुम मेरे इकलौते पुत्र हो ! तुम्हारे पास आवश्यकता से अधिक धन है। और ज्यादा धन कमाकर तुम क्या करोगे ? समुद्री यात्रा खतरों से खाली नहीं है। मेरी बात मान कर अपनी यात्रा बंद करो। घर पर ही रह जाओ ! मैं तुमसे यही चाहती हूँ !"

पर मित्रविंद ने अपनी माँ की बात नहीं मानी। उसने समुद्री यात्रा पर जाने का हठ किया। इस पर माता ने उसका हाथ पकड़ कर गिड़गिड़ाते हुए उसे यात्रा पर जाने से रोकना चाहा, लेकिन उस दुष्ट ने अपनी माता को पीटा और जबर्दस्ती हाथ छुड़ाकर घर से निकल गया।

उसी दिन मित्रविंद की नाव यात्रा पर चल पड़ी। सात दिन तक समुद्री यात्रा बिना विघ्न-बाधा के आराम से चली, पर आठवें दिन समुद्र के बीच नाव आगे बढ़ने से रुक गई। नाव के नाविकों ने सोचा कि इस दुर्घटना का कारण नाव के यात्रियों में से कोई ज़रूर होगा ! इस ख्याल से उन लोगों ने उसका पता लगाने केलिए चिट बांटा। उस चिट पर मित्रविंद का नाम निकला। इसपर तीन बार चिट बांटे गये, तीनों बार चिट पर मित्रविंद का नाम निकला।

इसपर नाविकों ने नाव से एक छोटी सी डोंगी निकाली, उसपर मित्रविंद को छोड़कर बाकी सब अपने रास्ते नाव पर आगे बढ गये।

कई दिन यातनाएँ झेल कर आखिर मित्रविंद एक टापू पर पहुँचा। उस टापू में मित्रविंद को संगमरमर का एक महल दिखाई दिया। उस में चार पिशाचिनियाँ निवास करती थीं। वे पिशाचिनियाँ सात दिन शौक से बिता

देती थीं और फिर एक सप्ताह तक अपने पापों का प्रायश्चित करने केलिए कठोर नियमों का पालन करती थीं। यह उनका नियम था। मित्रविंद ने उन पिशाचिनियों के साथ सात दिन विलास पूर्ण जीवन बिताया, पर जब पिशाचिनियों ने सात दिन तक कठोर व्रत का पालन करना प्रारंभ किया तब उसका मन उस व्रत का आचरण करने को तैयार न हुआ। इस पर वह अपनी डोंगी पर वहाँ से चल पड़ा।

कुछ दिन की समुद्री यात्रा के बाद मित्रविंद दूसरे टापू पर पहुँचा। उस टापू में आठ पिशाचिनियाँ निवास करती थीं। मित्रविंद ने उन पिशाचिनियों के साथ एक हफ़्ता बिताया, इसके बाद उन पिशाचिनियों ने ज्यों ही कठोर व्रत शुरू किया, त्यों ही वह अपनी डोंगी पर वहाँ से निकल पड़ा।

इस प्रकार उसने एक टापू में सोलह पिशाचिनियों के साथ और दूसरे टापू में बत्तीस पिशाचिनियों के साथ एक सप्ताह विलास पूर्ण जीवन बिताया; आखिर अपनी डोंगी पर वह एक और टापू में पहुँचा।

उस टापू में एक विशाल नगर था। उसके चारों तरफ़ ऊँची दीवार बनी थी। उसके चार द्वार थे। वह उस्सद नरक था, लेकिन मित्रविंद को वह नरक जैसा प्रतीत न हुआ। बल्कि वह एक सुंदर नगर जैसा लगा। उसने अपने मन में सोचा- "मैं इस नगर में प्रवेश करके इसका

राजा बन जाऊँगा।"

नगर के अन्दर एक स्थान पर मित्रविंद को एक व्यक्ति दिखाई दिया। वह अपने सर पर असिधारा चक्र ढो रहा था। उसकी धार पैनी थी। साथ ही वह चक्र बोझीला था। इस कारण वह चक्र उस आदमी के सर में धँस गया था। सर से रक्त की धाराएँ बह रही थीं। उसका शरीर पांच लड़ियों वाली जंजीर से बंधा हुआ था। वह पीड़ा के मारे कराह रहा था।

उस दृश्य को देखने के बाद भी मित्रविंद इस भ्रम में आ गया कि वह व्यक्ति उस नगर का राजा है! असिधारा चक्र मित्रविंद की आँखों को पद्म जैसा दिखाई दिया। उसकी देह पर बंधी जंजीर उसे एक अलंकृत आभूषण जैसी

प्रतीत हुई । उसकी कराहट गंधर्वगान जैसा सुनाई दिया ।

मित्रविंद उस नरकवासी के समीप जाकर बोला- "महाशय, आप बहुत समय से इस पद्म को अपने सर पर धारण किये हुए हैं । मुझे भी थोड़े समय केलिए धारण करने दीजिए !"

"महाशय, यह तो पद्म नहीं, बल्कि असिधारा चक्र है !" नरकवासी ने उत्तर दिया ।

"ओह, आप तो यह मुझे देना नहीं चाहते, इसीलिए आप यह बात कह रहे हैं ।" मित्रविंद ने कहा ।

"आज से मेरे पापों का परिहार हो गया है । यह भी मेरे जैसे अपनी माँ को पीट कर आया होगा ! उस पाप का फल भोगने केलिए ही यहाँ पर पहुँच गया होगा !" यों अपने मन में विचार करके नरकवासी ने अपने सर पर के असिधारा चक्र को उतार कर मित्रविंद के सर पर रख दिया और ख़ुशी के साथ अपने रास्ते चला गया ।

स्वर्ग में इन्द्र के पद पर रहने वाले बोधिसत्व देवगणों को साथ लेकर समस्त नरकों का निरीक्षण करते हुए थोड़े दिन बाद मित्रविंद के पास पहुँचे ।

बोधिसत्व को देखते, ही मित्रविंद रोते हुए बोला- "स्वामी, मुझ पर कृपा कीजिए ! कृपया यह बताइये कि इस चक्र से मेरा पिंड कब छूटेगा ?" इस पर इन्द्र ने मित्रविंद को यों समझाया- "तुमने अपार संपत्ति के होते हुए भी धन की कामना की । पिशाचिनियों के साथ सुख भोगा, मानव के द्वारा जिन अत्तम धर्म-मार्गों का अनुसरण करना चाहिए, वे तुम्हें अच्छे नहीं लगे । दूसरों ने तुम्हारे हित की कामना से जो सलाहें दीं, उनका तुमने तिरस्कार किया और तुमने जान- बूझ कर अपनी इच्छा से इस चक्र की मांग की । इसलिए तुम्हारे जीवन पर्यंत यह असिधारा चक्र तुमको नहीं छोड़ेगा !"

मित्रविंद अपनी इस दुर्दशा का कारण समझ कर दुख में डूब गया ।
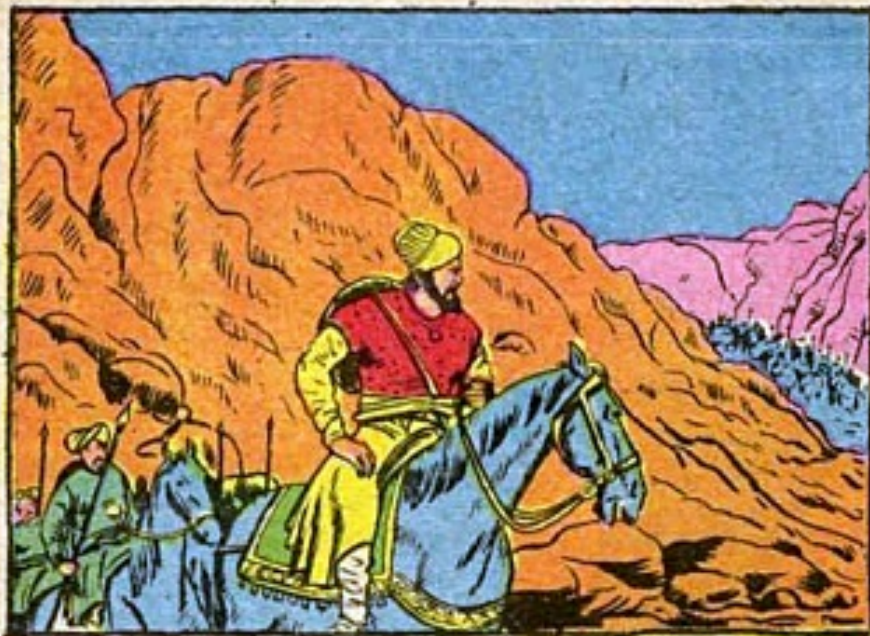
पुत्र का भी इसके पहले देहांत हो चुका था। इस कारण चित्तौड अकबर के अधिकार में आ गया। दूसरे दिन प्रातः काल दो हज़ार राजपूत सैनिक दुर्ग से बड़ी होशियारी से स्त्रियों व बच्चों के हाथों में हथकड़ियां लगा कर अकबर के सैनिक शिविरों से होकर बाहर निकल गये। अकबर के सैनिक इस धोखे में अ[illegible] उन्हीं के सैनिक क़ैदियों को [illegible] रहे हैं।

राजपूत वीरों के शौर्य एवं पराक्रम पर अकबर मुग्ध हो गये। दिल्ली लौटने पर उन्होंने उन वीरों के स्मारक के रूप में अपने क़िले के सामने घोड़ों पर सवार जयमल्ल और पुत्र की दो प्रतिमाएँ स्थापित करवाई।
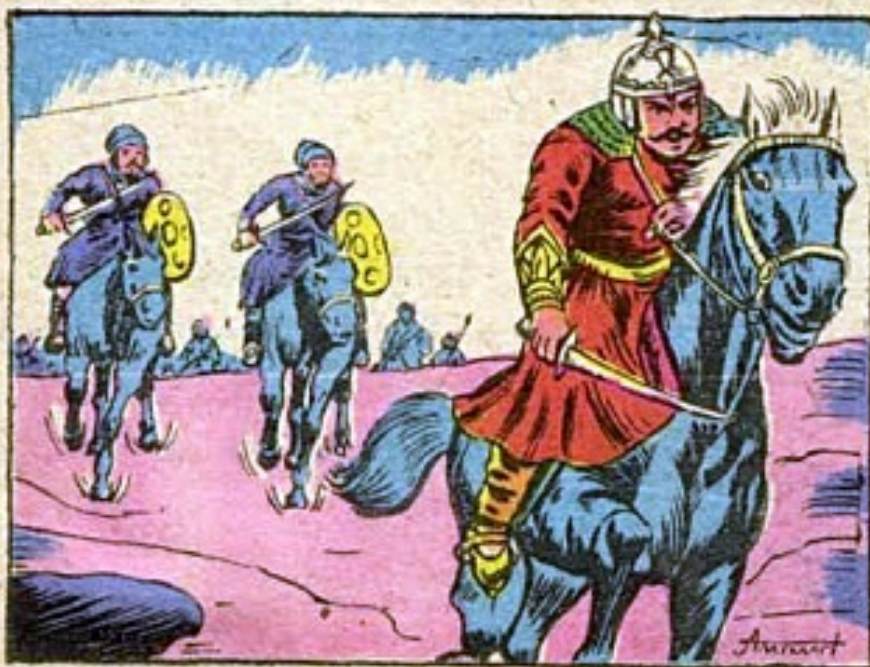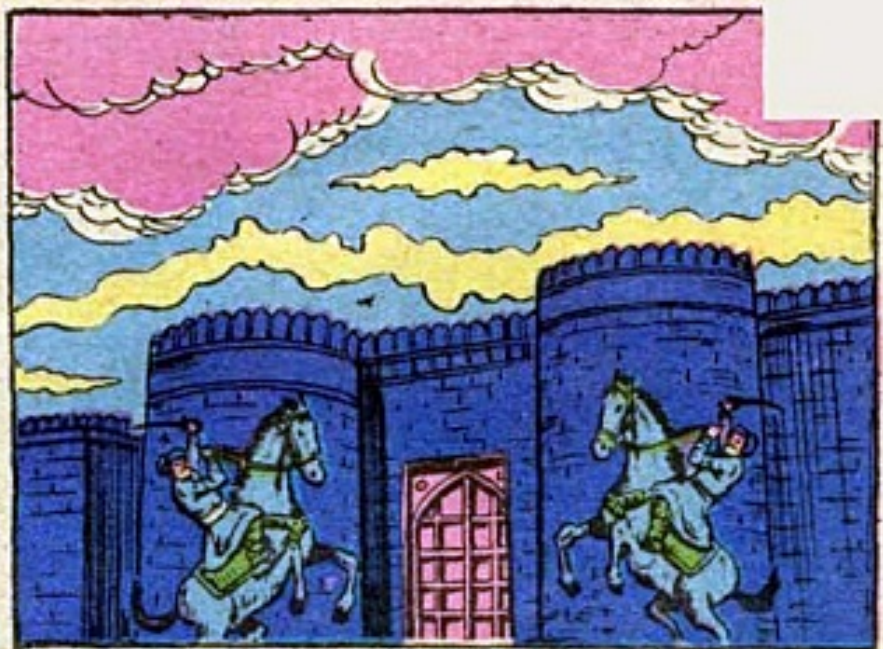
चित्तौड़ दुर्ग के हाथ से निकल जाने के बावजूद राणा-प्रताप ने मुगलों का सामना करने का विचार नहीं छोड़ा। अखिर उनके भाई शक्तिसिंह भी अकबर के पक्ष में चले गये। एक दिन प्रताप एक पहाडी तलहटी में अपने घोड़े चेतक पर जा रहे थे, तब असफखाँ के नेतृत्व में मुगल सेना ने उनका पीछा किया।

राणा प्रताप का घोड़ा चेतक घायल हो थक गया, फिर भी वह वायु वेग के साथ दौड़ा जा रहा था, उस वक्त किसी की पुकार सुन कर राणा प्रताप ने मुड़कर देखा। उस समय शक्तिसिंह कह रहा था— 'भैया, तुम्हारा घोड़ा मरने वाला है, तुम मेरा घोड़ा ले लो।' इसके बाद चेतक ने अपने प्राण त्याग दिये, तब अपने भाई शक्ति सिंह के घोड़े पर सवार हो प्रताप वहाँ से बच कर निकल गये ।

राणा प्रताप ने अपनी पत्नी व बच्चों के साथ जंगल में नाना प्रकार की यातनाएँ झेलीं । एक बार दुश्मन ने राणा के परिवार का सर्व नाश करने का प्रयत्न किया, उस समय जंगल के कुछ भील वंशियों ने राणा के बच्चों को अपनी टोकरियों में छिपा कर उनको ख़तरे से बचाया ।

राणा के बच्चों को कंद-मूल व पत्ते खाने तथा जंगली लताओं से निर्मित झूलों में झूलने के दुर्दिन भी देखने पड़े। उस हालत में भी राणा प्रताप ने शत्रु की अधीनता स्वीकार नहीं की ।

एक दिन राणा की बेटी जंगली कंद-मूल खा रही थी, उस वक्त एक जंगली बिलाव उस को झपट कर भाग गया। भूख के मारे अपनी पुत्री को रोते देख राणा की आँखें सजल हो उठीं। इस घटना के बाद राणा के मन में मुगलों की अधीनता स्वीकार करने की बजाय उनका सामना करने की लगन और दृढ हो गई।
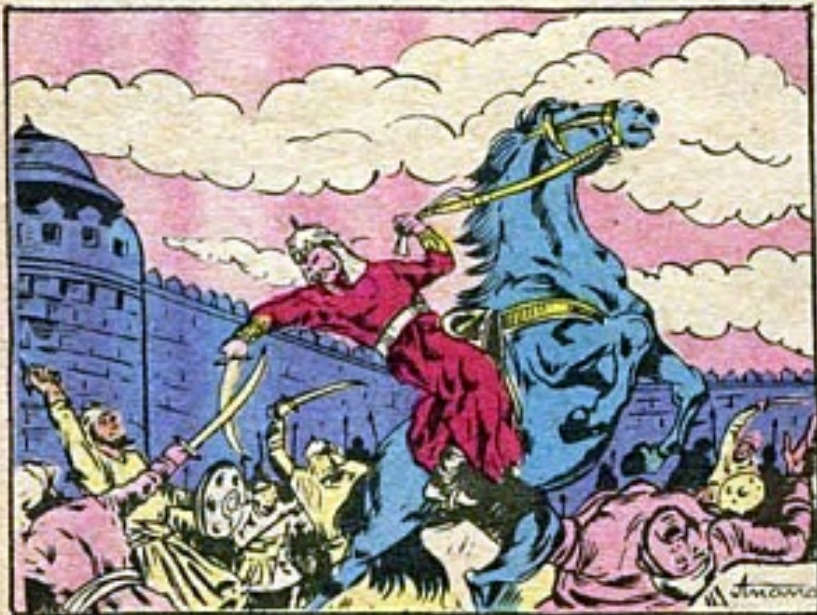
राणा प्रताप ने अपूर्व शौर्य व पराक्रम के साथ मुगलों से युद्ध किया। धीरे-धीरे मेवाड़ के कुछ परगणाओं को मुगलों के हाथों से अपने यधीन में कर लिया। अकबर के शासन के सामने सर न झुकाने वाले एक मात्र राजपूत राजा के रूप में वे यशस्वी हो गये।

राजपूतों के साहस और पराक्रम के प्रतीक के रूप में अपना जीवन बिताने वाले राणा प्रताप भारत के इतिहास-प्रसिद्ध महा पुरुषों में एक हो गये। शक्तिशाली शत्रुओं का सामना करते तथा स्वतंत्र जीवन बिताते हुए राणा प्रताप ई-सन- १५९७ में अमर हो गये।

प्राचीन काल में कलिंग देश आदर्श न्याय लिए विशेष प्रसिद्ध था। इसका मुख्य कारण वहाँ पर न्याय की सुनवाई और निर्णय के लिए एक विचित्र साधन बनी न्याय की कैंची था।

वहाँ के राजा उनेक पीढ़ियों से इस कैंची को एक अमूल्य वस्तु मानते आ रहे थे। वह कैंची अत्यंत अपूर्व पद्धति से किसी प्रकार की भूल के बिना न्याय-निर्णय कर देती थी।

न्याय की वह कैंची राजमहल के सामने लटका दी गई थी। मुद्दई व मुद्दालेह के किसी न्यायाधीश के पास फ़ैसले के वास्ते पहुँचे बिना न्याय की सुनवाई और निर्णय उस कैंची के द्वारा ही संपन्न हो जाता था।

मुद्दई और मुद्दालेह न्याय की कैंची के पास पहुँच जाते थे। दोनों पक्षों के समर्थक तथा न्याय का निर्णय सुनने केलिए कौतूहल रखनेवाले लोग उसके चारों तरफ़ जमा हो जाते थे। फ़रियाद करने वाला व्यक्ति अपने प्रति हुए अन्याय का परिचय देकर अपने दोनों हाथों को उस कैंची के बीच रख देता था। इसी प्रकार मुद्दई भी अपने को निर्दोष बता कर उस कैंची के बीच अपने हाथ रख देता था। उन दोनों में से जो झूठ बोलता था, उसके हाथ कैंची काट देती थी।

वहाँ के राजाओं केलिए वरदान के रूप में प्राप्त उस कैंची के सामने एक बार न्याय-निर्णय करने केलिए एक जटिल समस्या उत्पन्न हुई। किसी ने सपने में भी नहीं सोचा था कि ऐसी जटिल समस्या भी पैदा हो सकती है।

एक बार दो अड़ोस-पड़ोस के व्यापारियों के बीच एक विवाद उत्पन्न हुआ। दोनों ने अपना यह विवाद परस्पर सुलझाने की कोशिश की, पर यह विवाद सुलझा नहीं, बल्कि उलझता ही

प्रमीला गुप्त
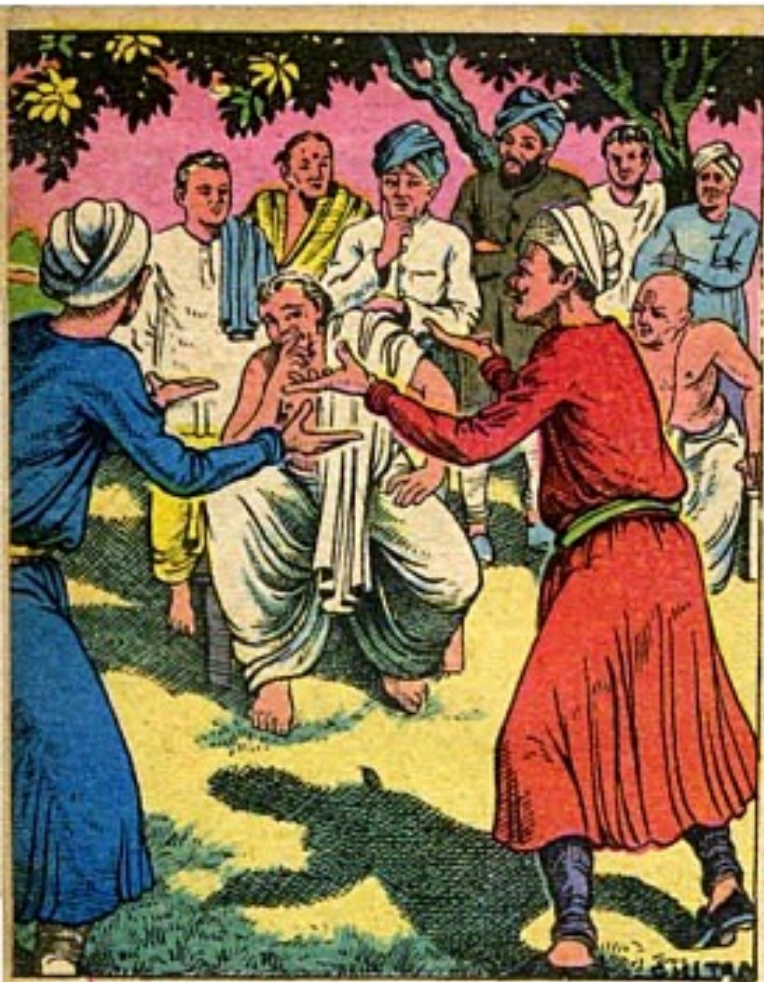
गया । आख़िर लोगों की सलाह पर प्रथम व्यापारी ने शिकायत की —'मैं ने दूर देश की यात्रा पर जाते हुए इनके पास एक सौ तोले सोना सुरक्षित रखने केलिए सौंप दिया था। लौट कर मांगने पर वह मेरा सोना देने से इनकार कर रहा है । यह कैसा अन्याय है ?

इस पर दूसरे व्यापारी ने अपना बयान देते हुए कहा- "मैं नहीं जानता कि ये दूर के देशों की यात्रा पर गये थे या नहीं; यह भी नहीं जानता कि सौ तोले सोना था या नहीं; पर यह बात मैं शपथ लेकर कह सकता हूँ कि इन्होंने सौ तोले सोना निश्चित रूप से नहीं दिया, उल्टे मुझे सोना दिखाया तक नहीं ।"

अब सवाल यह था कि इन दोनों में से कौन सच कहता है और कौन झूठ ? इस का निर्णय कैसे करें ? दोनों देवी-देवताओं के नाम क़सम खाकर शपथ ले रहे थे ।

इस पर कुछ प्रमुख बुजुर्ग इकट्ठे हुए। उन लोगों ने चार दिन की अवधि देकर स्पष्ट रूप से बताया कि यदि इस बीच वे दोनों आपस में समझौता न कर लें तो उन्हें न्याय की कैंची के निर्णय को मानना पड़ेगा ।

इस पर प्रथम व्यापारी ने कहा- "ये महाशय यह झूठ बोल रहे हैं कि मैं ने इनके पास सौ तोले सोना सुरक्षित रखने केलिए नहीं दिया है। इसलिए सचमुच ये दोषी हैं । यह बात सौ फी सदी सत्य है कि इन्होंने मेरे हाथ से सौ तोले सोना लिया है और उसे हड़प लिया है ।"

पर दूसरा व्यापारी जानता था कि न्याय की कैंची का निर्णय सत्य पर आधारित होता है ।

उसने इसके पूर्व स्वयं अपनी आँखों से देखा था कि झूठ बोलने व अन्याय करने वाले लोगों के हाथ कैंची के बीच रखने से कैंचीं ने उनके हाथ कतर दिये थे। इसलिए उस खतरे से बचने केलिए उसने पहले ही एक अनोखा उपाय सोच रखा था ।

निश्चित दिन दूसरा व्यापारी एक अनजान व भोले व्यक्ति की भांति हाथ की लाठी हिलाते हुए न्याय की कैंची के समीप पहुँचा ।

बीच-बचाव करने वाले और न्याय का निर्णय देखने की जिज्ञासा रखनेवाले असंख्य लोग राज महल के सामने हाज़िर हुए। न्याय की कैंची यथास्थान पर लटक रही थी।

सौ तोले सोना खोने वाला प्रथम व्यापारी ने कैंची के बीच अपने हाथ रख कर क़सम खा ली और आँखों में आँसू भर कर उसके प्रति जो अन्याय हुआ था, उसका बयान दिया। इस पर बिछवान और वहाँ पर इकट्ठे हुए लोग कैंची की ओर कुतूहल के साथ ताकने लगे। पर कैंची ज्यों की त्यों रह गई।

इसके बाद मुद्दालेह की बारी आ गई। वह निर्भयता पूर्वक न्याय की कैंची के निकट गया; अपने हाथ की लाठी मुद्दई के हाथ में सौंप दी, तब अपने हाथों को कैंची के बीच रख कर बोला- "मैं ने किसी का सोना गबन नहीं किया है। मुझ पर सौ तोले सोना गबन करने का जो इलजाम लगाया जा रहा है, यह भूठ है। सोना शायद उसी के पास हो!" ये बातें कह कर उसने शपथ ली।

बिचवान और वहाँ पर इकट्ठे हुए लोग निर्निमेष कैंची की ओर ताक रहे थे। उन लोगों ने सोचा था कि कैंची उस व्यापारी के हाथ कतर देगी! अलावा इसके सबने इस विचार से दूसरे व्यापारी को अपराधी माना था कि प्रथम व्यापारी के हाथ नहीं कटे थे।
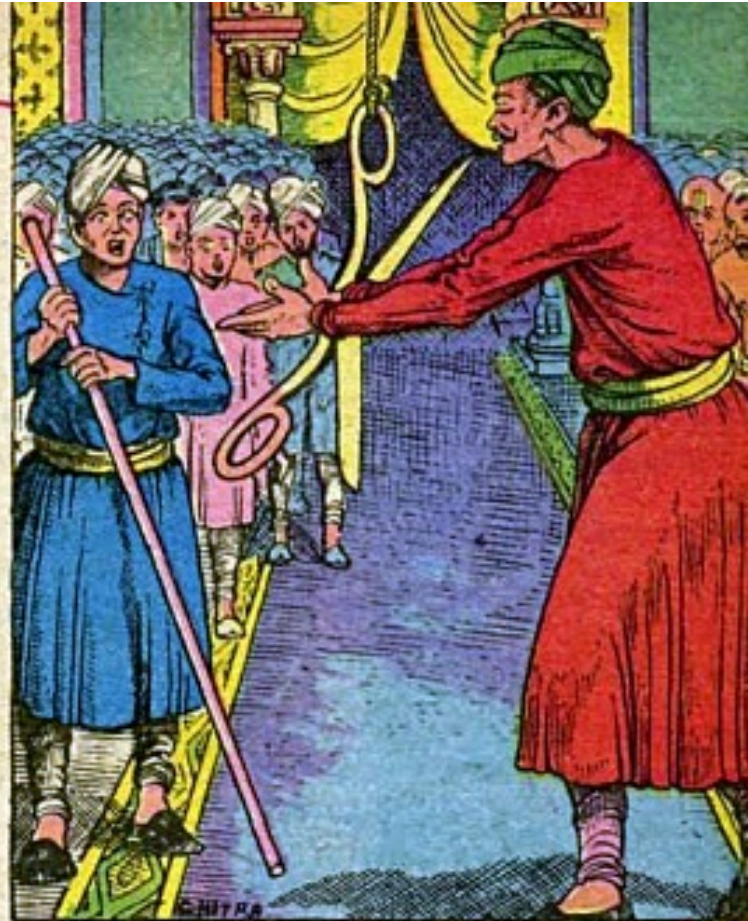
पर आश्चर्य की बात थी! न्याय की कैंची हिले-डुले बिना ज्यों की त्यों लटकती ही रही। लेकिन उन दोनों में दोषी कौन है? इसका निर्णय कैसे किया जाय। कैंची का न्याय-निर्णय उस नगर के लोगों ने स्वयं देखा था। पर आज तक कैंची इस प्रकार हिले-डुले बिना नहीं रही। कुछ लोगों के मन में यह संदेह पैदा हो गया कि कैंची की न्याय-निर्णय करने की शक्ति अब नष्ट हो गई हो! या उन दोनों की फ़रियाद ही झूठ हो! इस प्रकार लोगों के मन में तरह-तरह के विचार उत्पन्न होने लगे। साथ ही उनका कुतूहल बढ़ता ही गया।

उस देश में ऐसी घटना कभी न घटी थी। सारी जनता विस्मित हो देख रही थी। बिचवानों की समझ में कुछ न आया। वे सर थामे बैठे रहे। न्याय का निर्णय करने में कभी संकोच न करने वाली वह कैंची आज स्तब्ध क्यों है ?

अचानक वहाँ पर जमा हुए लोगों में से एक बुजुर्ग के मन में एक युक्ति सूझी। उसका वास्तविक रहस्य उसने भांप लिया। अपराध करने वाले व्यापारी ने न्याय के निर्णय में जो जटिलता पैदा की थी, उसको सुलझाना न्याय की कैंची केलिए भी संभव नहीं है, यह बात तय हो गई।

उस धूर्त न्यापारी ने वक्र रीति से विजय प्राप्त की थी। वह अपनी बुद्धिमत्ता पर इतराने लगा। उसने कैंची के बीच हाथ रखने के पूर्व जो लाठी प्रथम व्यापारी के हाथ दे दी थी, उसे शपथ लेने के बाद उस व्यापारी के हाथ से लिया और घर लौटने को हुआ। उस व्यापारी के चेहरे पर विजय पाने की खुशी झलक रही थी। उसकी आँखों में सब को बुद्धू बनाने की अपनी अक्लमंदी का गर्व झांक रहा था। उसके ओठों पर मुस्कुराहट खिल रही थी। वह अपने विजय गर्व से छाती फुला कर चल पड़ा।

उसने चार-पांच क़दम ही आगे बढाये थे कि पीछे से उसे किसी की पुकार सुनाई दी। उस बुजुर्ग ने झट उस व्यापारी के हाथ से लाठी छीन ली और उसे फट से तोड़ डाला।

उस लाठी के भीतर से खन खन ध्वनि के साथ एक सौ तोला सोना नीचे गिरते हजारों लोगों ने देखा। इस पर सब लोग अचरज में आ गये।

इस पर बुजुर्गों ने सौ तोले सोना प्रथम व्यापारी को दिलवाया और दूसरे व्यापारी को दण्ड दिया। इसके बाद न्याय का निर्णय करने में असफल हुई उस कैंची को वहाँ से हटवाकर राज महल के पुराने उपकरणों की कोठरी में डलवा दिया।

उस दिन से उस राज्य के न्यायाधीशों को ही न्याय का निर्णय करने की जिम्मेदारी सौंप दी गई।
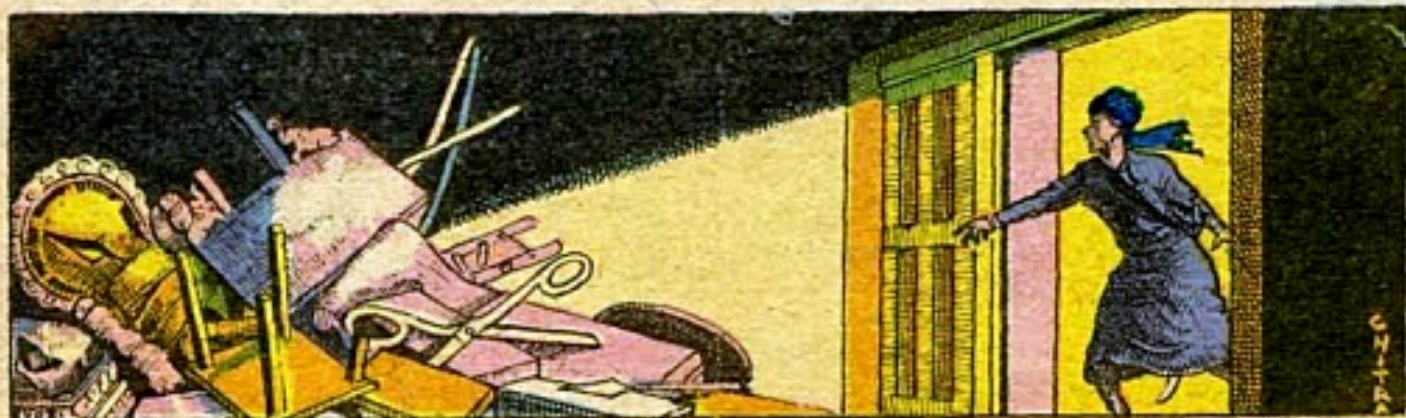
इस बात को मैं सहन नहीं कर सकता ।"

"आप दस पीढ़ियों तक सुखी रहें । मैं भूख की इस पीड़ा को बर्दाश्त नहीं कर पाता हूँ !" सक्काषिक ने कहा ।

"तब तो तुम इस जून यहीं रह कर मेरे साथ खाना खा लो ।" यों कह कर बूढ़े ने अपने नौकर को पुकारा और हाथ-मुँह धोने केलिए पानी तैयार रखने का आदेश दिया । इसके बाद सक्काषिक को अपने साथ मकान के भीतर ले गया, फिर वह एक तरफ़ चला गया, झूठ-मूट की सुराही में से पानी गिरा कर हाथ धोने का अभिनय किया, फिर षक्काषिक से कहा- "देखते क्या हो ? तुम भी अपने हाथ साफ़ कर लो ।"

फिर बूढ़े ने ऐसा स्वांग रचा, मानो उसके हाथ भीग गये हैं और वह तौलिये से अपने हाथ पोंछ रहा है !

षक्काषिक की समझ में न आया कि यह स्वांग क्यों रचा जा रहा है । फिर भी बूढ़े के इस मजाक को देख मन ही मन खुश होते हुए उसने भी हाथ साफ़ करने का अभिनय किया ।

"अरे, दस्तरखाँ पर कपड़ा बिछा कर जल्दी खाना परोसो । बेचारा यह अभागा बहुत ही ज्यादा भूखा मालूम होता है !" यों अपने नौकरों को आदेश दिया ।

दूसरे ही क्षण एक साथ कई नौकर दौड़े दौड़े आ पहुँचे । कुछ ने मेज पर वस्त्र बिछाने का अभिनय किया । कुछ ने मेज पर थालियाँ सजाने और खाने की चीज़ें परोसने का स्वांग रचा ।
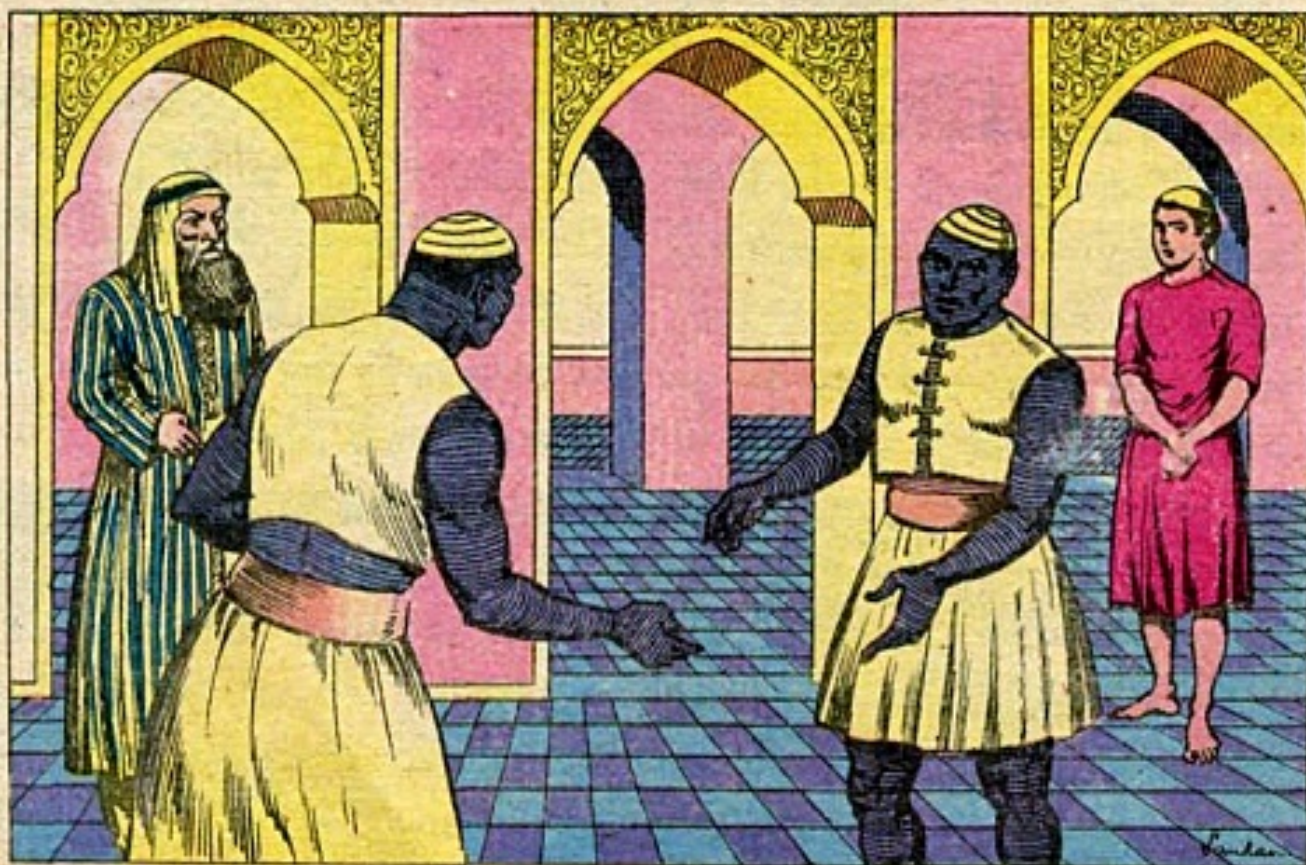
यों तो षक्काषिक के पेट में चूहे दौड़ रहे थे, फिर भी वह इस स्वांग को सहकर तमाशा देखता रहा। क्यों कि वह अच्छी तरह से जानता था कि धनियों के शौक की आलोचना करना दरिद्र केलिए खतरे से खाली नहीं होता।

"बैठो भाई! अब खाना शुरू करो।" यों कह कर बूढ़ा सामने से कुछ उठाने तथा उसका स्वाद लेने का स्वांग रचते हुए गाल चलाने लगा।

"देखो, संकोच मत करो। तुम जितना खा सकते हो, खा लो! लो, इस रोटी को देखते हो न? यह कैसी सफ़ेद है!" बूढ़ा बोला

"ऐसी सफ़ेद रोटी मैं ने आज तक कहीं देखी तक नहीं है! इसका स्वाद भी अद्भुत है!" यों कहकर षक्काषिक भी खाने का अभिनय करने लगा।

बूढे ने उस रोटी को बनाने वाली नीग्रो औरत और उसको दिये जाने वाले वेतन का वर्णन किया तथा उनके सामने कल्पित सब्जियों और मांस-पदार्थों का विस्तार पूर्वक वर्णन करके सुनाया। उनके स्वाद और गंध की प्रशंसा की। उनका वर्णन सुनते सुनते षक्काषिक की भूख और बढ़ गई।

साधारण भोजन के समाप्त होने पर बूढे ने हलुवा और मिठाईयाँ लाने को पुकारा। नौकरों ने भी उन व्यंजनों को परोसने का अभिनय किया।

बूढे ने उन चीज़ों का भी विशद वर्णन किया, उनकी तारीफ़ की और उनके स्वाद के
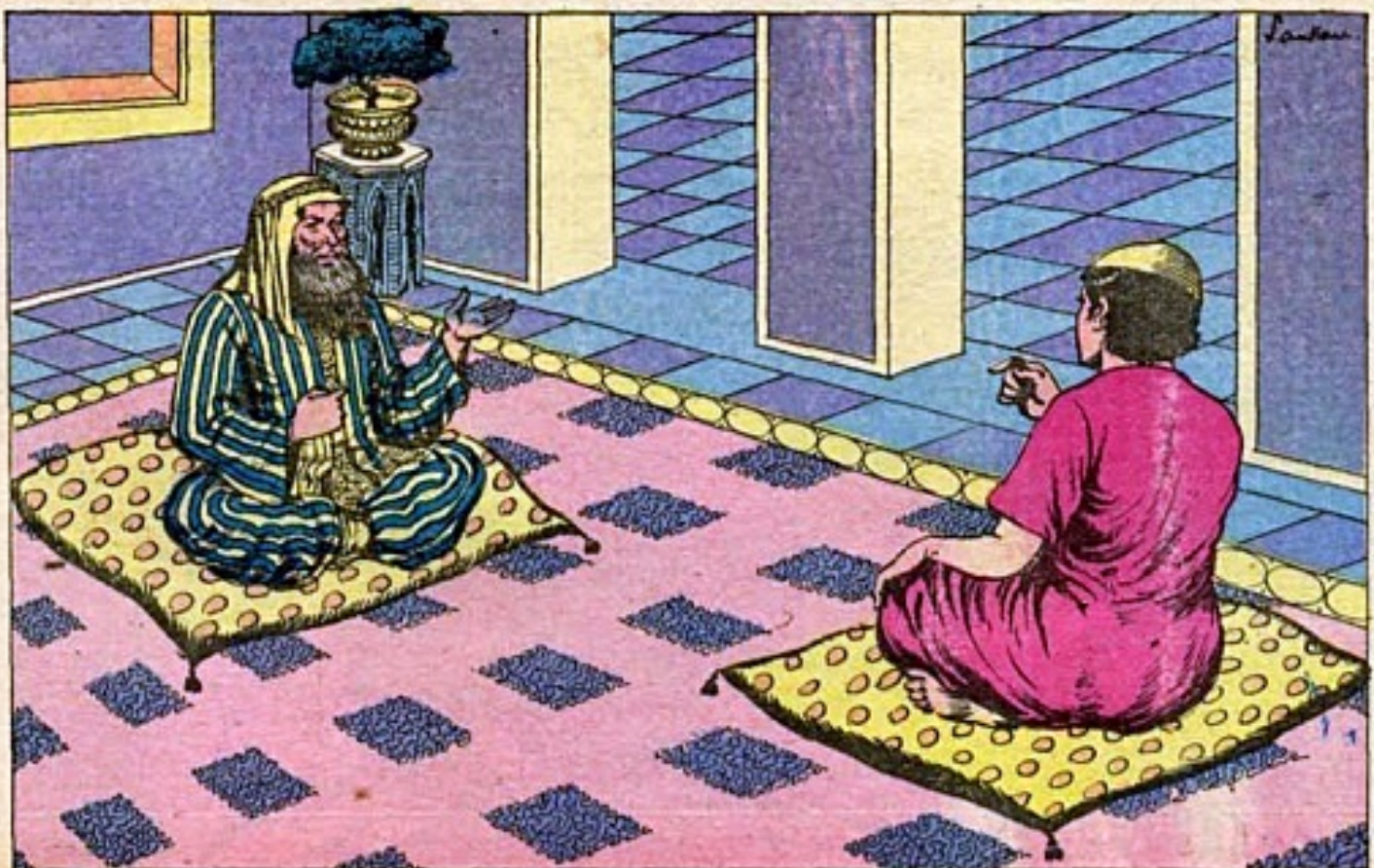
बारे में उस अभागे अतिथि की राय मांगी ।

इस के बाद वृद्ध ने फल और फलों के रस लाने की आज्ञा दी । नौकरों ने भी झट मेज़ पर रखी सारी थालियों को ले जाने का अभिनय किया । फिर शरबत और शराब लाने का स्वांग रचा ।

"बेटा, यह शरबत पी लो । ऐसी शरबत तुम्हें कहीं नहीं मिलेगी ! इस शराब को देखते हो न ? बहुत ही पुरानी है ! पिओ, मजे से पी लो ।" यों बूढ़ा अपने अतिथि को प्रोत्साहित करते उस के मुँह से गिलास लगाने का नाटक रचने लगा ।

यहाँ तक षक्काषिक बूढ़े के इस नाटक को देख कर सहन करता रहा । अब उस से सहा नहीं गया । वह झट से उठ खड़ा हुआ और बूढ़े की गर्दन पर दे मारा । उसके प्रहार से सारा मकान एक बार गूँज उठा ।

बूढ़े ने क्रोध में आकर गरज कर पूछा- "अरे चण्डाल ! यह तुम क्या करते हो ?"

"मालिक ! मैं आपका गुलाम हूँ । आप ने मुझे वह शराब पिलाई, जिस से ज्यादा नशा चढ़ गया । मुझे शराब पीने की आदत नही है, इसी का यह नतीज़ा है !" षक्काषिक बोला ।

यह उत्तर सुनकर बूढ़ा खिल-खिला कर हंस पड़ा और बोला- "अरे चतुर, मैं ने इसी प्रकार कई लोगों को रुलाया है,पर किसी ने भी तुम्हारे जैसे सन्नता नहीं दिखाई। तुम्हारे जैसे मजाकिया स्वभाव को भी मैं ने किसी के अन्दर नहीं देखा । तुमने मुझे अच्छा सबक़ सिखाया है ! बैठ जाओ, तुम्हें सचमुच की दावत खिलाता हूँ ।"

इस बार सच्ची चीज़ें मेज़ पर परोसी गईं । इसके पूर्व बूढे ने जिन जिन चीज़ों का वर्णन किया था उन पदार्थों को इस बार प्रत्यक्ष रूप में खाकर षक्काषिक ने आनंद का अनुभव किया ।

उस दिन से षक्काषिक को फिर कभी भूखा रहने की जरूरत न पड़ी । क्यों कि बूढ़ा जब तक जिंदा रहा, तब तक उसे अपने साथ बिठा कर खाना खिलाता रहा ।

सबसे भयंकर जानवर

एक निर्जन वन में सिंह के शासन में सब प्रकार के पक्षी और जानवर सुख पूर्वक जीवन बिताते थे। उस जंगल में कभी किसी मानव ने कदम नही रखा था। उसी जंगल में एक दिन एक बतख ने निद्रा में एक सपना देखा। एक मानव ने सपने में दर्शन देकर उसे पुचकारा और अपने पास बुलाया। बतख मानव के पास जा रहा था, तब उसे लगा कि कोई उसके कान में जोर से चिल्ला रहा है- "सुनो, तुम उस जानवर से सावधान रहो ! वह सबसे ज्यादा खूँख्वार और क्रूर है।" ये बातें सुनकर बतख चौंक कर जाग उठा और उस घबराहट में अंधा धुंध जंगल में भागने लगा।

काफी दूर तक दौड़ने के बाद मृगराज सिंह की गुफा के सामने खड़ा हुआ युवराज उसे दिखाई दिया। उस युवराज को उसके माँ-बाप गुफा को पार कर जाने नहीं देते थे। इसलिए उसे दुनियादारी का ज्ञान न था और जंगल के अन्य जानवरों के साथ उसका परिचय भी न था।

एक पक्षी को घबराहट के साथ दौड़ते हुए आते देख युवराज ने पूछा- "हे पक्षी, तुम कौन हो ? किस जाति के पक्षी हो ? क्यों इस तरह तुम घबराये हुए हो ?"

"युवराज, मैं बतख हूँ; बतख जाति का पक्षी हूँ। मैं ने सपने में एक मानव को देखा। मैं ने यह भी सुना कि मानव एक भयंकर जानवर है, इसलिए डर के मारे भाग रहा हूँ।" बतख ने कहा।

"पगले, मैं मृग राज हूँ ! मेरे रहते तुमको किसी जानवर से डरने की कोई जरूरत नहीं है ! मैं उस मानव का पेट चीर डालूँगा। कुछ दिन पहले सपने में मुझे भी इसी तरह की चेतावनी मिली। लेकिन आज तक मुझे किसी

रामश्रीवास्तव
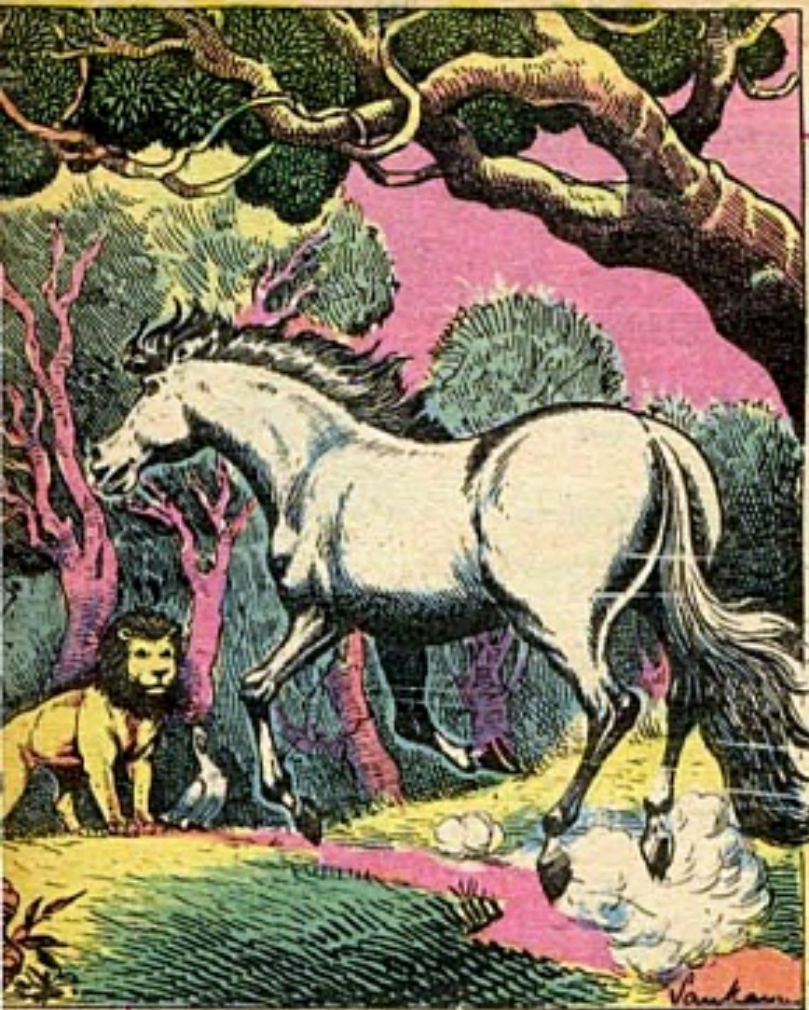
ख़तरे का सामना करना नहीं पड़ा।'' यों समझा कर सिंह उस दिशा में आगे बढ़ा जिस दिशा से बतख आया था। बतख भी फुदकते हुए उसका अनुसरण करने लगा।

वे थोड़ी ही दूर आगे बढ़े थे कि दूर पर उन्हे धूल उड़ती दिखाई दी। इस पर युवराज सिंह बोला- ''लो देखो ! ऐसा मालूम होता है कि मानव चला आ रहा है। तुम छिप जाओ, मैं उसका अंत कर डालूँगा।''

लेकिन उसके समीप जाकर देखते क्या है ? वह एक गधा था। सिंह ने पूछा- ''तुम कौन हो ? किस जाति के हो ? क्यों इस तरह घबरा कर दौड़ते हो ?''

''महाराज, मैं गधा हूँ। आप कल्पना तक नहीं कर सकते कि मानव ने मुझे किस प्रकार सताया है ? मैं ने कितना बोझ ढोया, कितनी मार खाई। खाना कम दिया जाने लगा। अब वह जरूर मुझे मार डालेगा।'' गधे ने जवाब दिया।

''मैं मृगों का राजा हूँ ! मेरे रहते तुम को कोई मार नहीं सकता। तुम देखोगे कि मैं मानव का कैसे वध करता हूँ। तुम मेरे साथ चलो।'' सिंह ने कहा।

''महाराज, क्षमा कीजिए। उस मानव की दृष्टि में पड़ने की मेरी हिम्मत नहीं है।'' यों कह कर गधा आगे बढ़ चला।

थोड़ी देर बाद दूर पर फिर धूल उड़ी। मगर इस बार एक घोड़ा फेन उगलते, हांफते चला आया। सिंह ने उसको रोक कर उसका नाम, जाति और भागने का कारण पूछा।

घोड़े ने संक्षेप में उत्तर दिया- ''महाराज, मैं मानव नामक एक भयंकर जानवर से डर कर भाग रहा हूँ।''

''तुम तो इतने बड़े जानवर हो। बड़ी ताक़त भी रखते हो। फिर भी मानव से डरते हो ? क्या मानव तुम से भी ज्यादा बलवान है ?'' सिंह ने पूछा।

महाराज, ज्यादा बलवान न हुआ तो क्या हुआ ? वह बड़ा ही धूर्त, क्रूर और चतुर है !

उसने कई साल तक मुझ से बेगारी करवाई ! मेरी पीठ पर सवार हो मेरे मुँह में लगाम लगाया, मुझपर चाबुक चलाया, हजारों कोसों तक मुझ पर सवारी की। अब मैं बूढ़ा हो गया हूँ। इसलिए मुझे मार कर मेरा चर्म लेना चाहता है।'' घोड़े ने उत्तर दिया। इसके बाद सिंह ने उस को हिम्मत बंधाने की बड़ी कोशिश की, पर कोई फ़ायदा न हुआ। आखिर घोड़ा वहाँ से भाग गया।

इसके बाद एक ऊँट दौड़ा आया। वह भी मानव से डरकर भाग रहा था। सिंह ने उसको समझाया- ''तुम सब लोगों की रक्षा करने की जिम्मेदारी मेरी है। इसलिए तुम भागो मत। यहीं पर रह जाओ। तुम्हारे पीछे चले आने वाले मानव को मैं उचित सबक सिखाऊँगा।'' पर ऊँट ने क्षमा मांग ली और मानव की आँख में पड़ने से बचकर भाग गया। सिंह के मन में इस बात का आश्चर्य हुआ कि मानव से डर कर भागने वाले उन जानवरों के दिलों में उसके प्रति थोड़ा सा भी विश्वास क्यों नहीं है ?

थोड़ी देर बाद एक बूढ़ा आदमी उधर से आ निकला। उसके सर पर एक टोकरी थी, टोकरी में बढ़ईगिरि के कुछ औजार थे और उनके ऊपर लकड़ी के तख्ते थे। सिंह को देखते ही उस ने अपने सर से टोकरी उतारी और बड़ी विनय के साथ साष्टांग प्रणाम करके बोला- ''महाराज की जय हो। आप एक हज़ार वर्ष तक सुख पूर्वक जियें।'' उस बूढ़े के शरीर पर झुर्रियाँ देख सिंह शावक ने सोचा कि यह भी एक

विचित्र जानवर है, वह ठठाकर हँस पड़ा। फिर पूछा- "तुम कौन हो ? किस जाति के हो ? क्या तुम भी मानव से डर कर भागते जा रहे हो ?"

बढ़ई को देखते ही बतख बेहोश हो गया, इसलिए वह सिंह को बता नहीं सका कि वही मानव है !

बढ़ई बोला- "महाराज, मैं एक बढ़ई हूँ। बढ़ई जाति का हूँ। आप के यहाँ जो चीता मंत्री पद पर है, उन्होंने अपने लिए एक मकान बनवाकर देने को कहा। इसीलिए मैं उनके यहाँ जा रहा हूँ।"

"अरे तुम पहले मुझे मकान बना कर दिये बिना चीते के लिए कैसे बनाओगे ? हमारे लिए मकान बनाकर दो, तब किसी के लिए बनाना।" सिंह ने कहा।

बढ़ई टोकरी उठाकर सर पर रखे वहाँ से निकलते हुए बोला- "पहले मुझे चीते का मकान बनाने दीजिए, इसके बाद मैं आप के वास्ते एक बहुत बड़ा महल बनवाकर दूँगा।"

"अरे बढ़ई जाति के जानवर ! जानते हो, मैं कौन हूँ ?" यों कह कर सिंह ने अपने अगले पैर के पंजे से बढ़ई को ढकेल दिया। बढ़ई चित गिर गया। उसके सर पर की टोकरी दूर जा गिरी और औजारों की आवाज़ गूँज उठी।

"जी हुजूर। आप के आदेशों का पालन करूँगा।" यों कहकर बढ़ई ने कटघर जैसा एक पिंजडा बनाया और उस में सिंह के घुसने लायक़ द्वार रखा। तब बोला- "आप इसके अन्दर जाकर देख लीजिए।"

इसके बाद सिंह के पिंजड़े के अन्दर जाते ही बढ़ई ने झट उसका किवाड बंद किया, और सिंह को अपने नगर में ले जाने केलिए चल पड़ा।

"अरे बढ़ई, यह तुम क्या करते हो ? मुझे कहाँ ले जा रहे हो" पिंजडे के भीतर से सिंह ने गरज कर पूछा।

"मैं ही मानव हूँ। मुझको देख तुम्हें भाग जाना चाहिए था।" यों जवाब देकर बढ़ई अट्टहास कर उठा।

विष्णु पुराण

बलि चक्रवर्ती सुतल लोक में पहुँच कर पाताल सम्राट के रूप में प्रति दिन विष्णु के चरणों की अर्चना करते रहें। इस कारण देवताओं को स्वर्ग और इंद्र को स्वर्ग पर आधिपत्य फिर से प्राप्त हुए।

बलि के सुतल लोक के द्वार पर वेत्र दण्डधारी विष्णु पहरा दे रहे थे। उन्हीं दिनों रावण सुतल पर विजय पाने केलिए पहुँचे। वह इस विचार से सुतल लोक में प्रवेश करने लगा कि आख़िर यह बौना मेरा क्या बिगाड़ सकता है। तब विष्णु ने विशाल रूप धर कर अपने पैर के नाखून से रावण को टोका। इस पर रावण लंका में जा गिरा और बेहोश हो गया। इसके बाद उसने कभी पाताल लोक की ओर आँख उठा कर देखने की हिम्मत नहीं की।

बलि चक्रवर्ती का यह नियम था कि वह जिस प्रदेश पर शासन करते थे, उस का निरीक्षण अदृश्य रूप में वर्ष में एक बार कम से कम अवश्य करते थे। इसी विचार से पृथ्वी पर, अपने सुसंपन्नता एवं शांति पूर्ण शासन तथा वहाँ की शस्य श्यामल फसलों का निरीक्षण करने आया। वह शस्यों को पुष्टि और जीवनी शक्ति प्रदान करता। कृमि-कीटों से उनकी रक्षा करता। उसके स्वागत के रूप में दीपावली पर्व मनाया जाता। दूसरे दिन बलि प्रथमा के रूप में उसकी पूजा की ज़ाती, वामन के त्रिविक्रम आकाश-विजय के चिह्न के रूप में आकाश-दीप सजाया जाता।

दक्षिण महा समुद्र में बलि चक्रवर्ती के

दत्तात्रेय की कहानी

पृथ्वी पर पहुँचने के द्वार के रूप में एक द्वीप उत्पन्न हुआ, जो बाली द्वीप के नाम से प्रसिद्ध है ।

बलि चक्रवर्ती के वंशज पल्लव राजाओं ने उसके नाम पर शिल्प-चित्रों के वैभव के साथ महाबलिपुरम का निर्माण किया । कांचीपुर में त्रिविक्रम वामनावतार की मूर्ति प्रतिष्ठित की ।

बलि चक्रवर्ती का यश शाश्वत रूप को प्राप्त हुआ ।

बलि चक्रवर्ती के शासन काल में जो क्षत्रिय अनुशासित थे, वे बाद को विच्छृंखल हो उठे । वे जनता को अनेक प्रकार से सताने लगे । उनके अत्याचारों से जनता में असंतोष फैल गया । पीड़ित प्रजा हमेशा अपने राजा को कोसती रही । राज्य छोटे-मोटे टुकड़ों में बंट गये । राजाभी परस्पर लड़ने लगे । इस कारण वे भी दुर्बल हो गये । सब जगह अराजकता फैल गई थी । हालत ऐसी थी — जिसकी लाठी, उस की भैंस । उस हालत में पृथ्वी पर शक्तिशाली व्यक्ति का अधिकार हो गया । राजा भी नियंता बन बैठे । उनके शासन में जनता त्रस्त हो उठी ।

उस हालत में विष्णु ने दशावतारों में से छठा परशुराम का अवतार धारण किया । जंगल को समूल काटने के बराबर इक्कीस दफ़ें क्षत्रियों को परशु से निर्मूल किया और यह साबित किया कि जब जिस की आवश्यकता होती है उसकी पूर्ति करने केलिए वे अवतरित हुआ करते हैं ।

उस काल में धरती पर शासन करने वाले शासकों के सिरमौर हैहेय चक्रवर्ती कार्तवीर्याजुन सुदर्शन चक्र के अंश को लेकर पैदा हुए थे ।

किसी जमाने में विष्णु योग निद्रा में निमग्न थे । तब उनके शंख और चक्र के बीच तर्क-वितर्क हुआ । इस पर चक्र बोला- "सहस्र किरण वाले सूर्य को तराशने पर जो रज निकला, उसी से विश्व कर्म ने मेरा निर्माण किया । सहस्र कोणों के साथ क्षिप्र गति से

घूमते हुए मैं ने ही तो असंख्य राक्षसों का संहार किया था। मुझे धारण कर विष्णु "चक्री" नाम से विख्यात हुए। तुम तो सिर्फ ध्वनि करते हो, इसके अतिरिक्त कुछ नहीं जानते।"

इस पर पांचजन्य शंख क्रोध में आया और बोला- "हे चक्रपुरुष। तुम्हारा ऐसा घमण्ड! तुम पृथ्वी पर एक घमण्डी राजा के रूप में पैदा हो जाओगे। विष्णु मुनि पुत्र बनकर लकड़ी चीरने वाली कुल्हाडी से तुम्हारा घमण्ड तोड़ देंगे।"

शापित चक्रपुरुष कार्त वीर्यार्जुन के रूप में पैदा हुए और उन्होंने हैहय साम्राज्य को चतुर्दिक फैलाया। वह भगवान के अवतार रूपधारी दत्तात्रेय के भक्त और शिष्य भी थे। उनके अनुग्रह से कार्त वीर्यार्जुन ने अणिमा आदि सिद्धियाँ और अनेक शक्तियाँ प्राप्त कीं। जरूरत के वक्त असंख्य आयुधों के साथ उसको एक हज़ार हाथ प्राप्त हो जाते थे।" यों सूत महर्षि ने समझाया। इसपर नैमिषारण्य के मुनियों ने पूछा- "सूत मुनीन्द्र, दत्तात्रेय विष्णु के अवतार ही तो हैं, पर हम यह नहीं जानते कि भगवान विष्णु दत्तात्रेय कैसे कहालाये और क्यों? उनको यह अवतार लेने की क्या आवश्यकता थी? ये सारी बातें हम नहीं जानते। इसलिए हम दत्तात्रेय की कहानी सुनने को उत्सुक हैं।"

सूत महर्षि ने दत्तात्रेय की कहानी शुरू कीः

अत्रि महर्षि ने पुत्र की कामना से भगवान के रूप में विष्णु का स्मरण करते हुए घोर तपस्या की।

विष्णु अपने साथ ब्रह्मा और शिवजी को लेकर प्रत्यक्ष हुए और महर्षि से बोले- "अत्रि महर्षि, मैं तुम्हारा दत्त बन गया हूँ। हम तीनों एक हैं, इसलिए त्रिमूर्तियों के अंशों से मैं तुम्हारा पुत्र बनूँगा और दत्तात्रेय के नाम से पुकारा जाऊँगा।" यों कह कर ब्रह्मा और शिवजी के साथ अदृश्य हो गये।

उसी समय नारद त्रिमूर्तियों की पत्नियाँ होने का गर्व करने वाली लक्ष्मी, सरस्वती और पार्वती के पास पहुँचे और उन्हें अत्रिमहामुनि

की पत्नी अनसूया के पातिव्रत्य की महिमा को असाधारण बता कर प्रमाणित किया। अनसूया ने त्रिमूर्तियों की पत्नियों के लिए असाध्य अनेक कार्य किये थे ।

अनसूया ने गंगा को सताने वाली पाप पिशाचिनियों को निर्मूल किया ।

नारद से प्राप्त लोहे के चने को पका कर दे दिया, सूर्योदय को रोकने वाली सुमति को मनाकर सूर्योदय के होने से मरने वाले उसके पति को अनसूया ने पुनः जिलाया ।

इस पर त्रिदेवियों के मन में अनसूया के प्रति इर्ष्या पैदा हो गई। उन देवियों ने अनसूया के पातिव्रत्य को बिगाड़ने केलिए अपने पतियों को उसके पास भेजा ।

ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर यतियों के वेष धर कर अत्रि के आश्रम में पहुँचे और "भवति भिक्षां देही" कहते द्वार पर खड़े हो गये ।

उस समय तक अत्रि महामुनि अपनी तपस्या समाप्त कर आश्रम को लौटे न थे । वे अतिथि- सत्कार की जिम्मेदारी अनसूया पर छोड़ गये थे ।

अनसूया ने त्रिमूर्तियों का उचित रूप से स्वागत करके उन्हें खाने केलिए निमंत्रित किया,उस समय कपट यति एक स्वर में बोले "हे साध्वी, हमारा एक नियम है । तुम नग्न होकर परोसोगी, तभी जाकर हम भोजन करेंगे ।"

अनसूया ने 'ओह, ऐसी बात है' यह कहते हुए उन पर जल छिड़क दिया । इस पर तीनों अतिथि तीन प्यारे शिशुओं के रूप में बदल गये ।

अनसूया के हृदय में वात्सल्य भाव उमड़ पड़ा। शिशुओं को दूध-भात खिलाया। त्रिमूर्ति शिशु रूप में अनसूया की गोद में सो गये। अनसूया तीनों को झूले में सुला कर बोली- "तीनों लोकों पर शासन करने वाले त्रिमूर्ति मेरे शिशु बन गये, मेरे भाग्य को क्या कहा जाय। ब्रह्माण्ड ही इनका झूला है। चार वेद उस झूले के पलडे की जंजीरें हैं। ओंकार प्रणावनाद ही इन केलिए लोरी है।" यों कह कर वह मधुर कंठ से लोरी गाने लगी ।

उसी समय कहीं से एक सफ़ेद बैल आश्रम

में पहुँचा, द्वार के सम्मुख खड़े हो सर हिलाते हुए उसने पायलों, की ध्वनि की ।

एक विशाल गरुड़ पंख फड़ फड़ाते हुए आश्रम पर फुर्र से उड़ने लगा । एक राजहंस विकसित कमल को चोंच में लिए उड़ते आकर द्वार पर उतर गया । अत्यंत प्यारे लगने वाले रंग-बिरंगे पिल्ले पूँछ हिलाते हुए घर में घुस पड़े । उनके साथ एक नाग फण फैला कर आ पहुँचा ।

उसी समय महती वीणा पर नीलांबरी राग का आलाप करते नारद और उनके पीछे लक्ष्मी, सरस्वती और पार्वती आ पहुँचे ।

नारद अनसूया से बोले- ''माताजी, अपने पतियों से संबंधित प्राणियों को आपके द्वार पर पाकर ये तीनों देवियाँ यहाँ पर आ गई हैं । ये अपने पतियों के वियोग के दुख से तड़प रही हैं । इनके पतियों को कृपया इन्हें सौंप दीजिए ।''

अनसूया ने विनय पूर्वक तीनों देवियों को प्रणाम करके कहा- '' माताओ, उन झूलों में सोने वाले शिशु अगर आप के पति हैं तो इनको आप ले जा सकती हैं ।''

तीनों देवियों ने चकित होकर देखा । एक समान लगने वाले तीनों शिशु गाढ़ी निद्रा में सो रहे थे । इस पर लक्ष्मी, सरस्वती और पार्वती संकोच करने लगीं, तब नारद ने उनसें पूछा- ''आप क्या अपने पति को पहचान नहीं स कतीं ? आप लजाइयेगा नहीं, जल्दी गोद में उठा लीजियेगा ।'' देवियों ने जल्दी में एक-एक शिशु को उठा लिया ।

वे शिशु एक साथ त्रिमूर्तियों के रूप में खडे हो गये । तब उन्हें मालूम हुआ कि सरस्वती ने शिवजी को, लक्ष्मी ने ब्रमा को और पार्वती ने विष्णु को उठा लिया है । तीनों देवियाँ शर्मिंदा होकर दूर जा खडी हो गईं । इस पर ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर इस तरह सटकर खड़े हो गये, मानो तीनों एक ही मूर्ति के रूप में मिल गये हो ।

उसी समय अत्रि महर्षि अपने घर लौट

आये । अपने घर त्रिमूर्तियों को पाकर हाथ जोड़ने लगे । तभी ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर ने एक होकर दत्तात्रेय रूप धारण किया ।

मध्य भाग में विष्णु तथा एक ओर ब्रह्मा और दूसरी तरफ शिव के मुखों के साथ, हाथों में शंख, चक्र, गदा, पद्म, त्रिशूल व कमण्डलू तथा कंधे पर लटकने वाले भिक्षा पात्र सहित, त्रिमूर्ति के रूप में विष्णु दत्तात्रेय का अवतार लेकर अत्रि और अनसूया के पुत्र बने ।

नारद ने नाद, नाम, क्रिया, राग सहित वीणा वादन करते दत्तात्रेय की स्तुति की । शिवजी का वाहन नंदी बछड़े के रूप में उनके पीछे होगा । चार बेद चार कुत्तों के रूप में उनके साथ रहेंगे । सर्प, हंस, गरुड, उन परिसरों में विहार करते होंगे । दत्तात्रेय एक महर्षि के रूप में सदा वनों में विचरते हुए एकांत में आत्मान्वेषण में होंगे । अनेक सिद्धियों तथा दिव्य शक्तियों को प्रदान करने वाले दत्तात्रेय की मुनि, सिद्ध व ज्ञानी सदा आराधना करते होंगे । हैहय राजवंश के आराध्य देव के रूप में वे पूजा प्राप्त करते होंगे ।

कार्त वीर्यार्जुन दत्तात्रेय की पूजा करके महान शक्तिशाली बनकर विशाल सेना को लेकर विजय-यात्रा पर चल पड़े ।

जमदग्नि महर्षि के पुत्रों में राम आखिरी व्यक्ति हैं । वह सदा कुल्हाडी लिये हुए आश्रम

व जनपदों का निर्माण करने तथा जमीन को खेती के लायक उपजाऊ बनाने लिए जंगलों को काटना ही उनका प्रमुख कार्य था ।

हिमालय में तपस्या करके उन्होंने शिवजी को प्रसन्न किया । शिवजी ने उनको बडा ही प्रभावकारी परशु प्रदान किया । उस परशु को धारण कर वे परशुराम कहलाए । भृगुवंशज होने के कारण वे भार्गवराम नाम से भी विख्यात हुए ।

एक समय परशुराम की माता रेणुका देवी नदी के तट पर गई और देर तक न लौटी । जमदग्नि ने अपनी दिव्य दृष्टि से पत्नी को देखा और समझ गये कि वह उस वक्त क्या कर रही

थी ।

चित्ररथ नामक गंधर्व अप्सराओं के साथ जल क्रीड़ाएँ कर रहा था, रेणुका तन्मय होकर उस विलास को देख रही थी। इस पर जमदग्नि क्रोध में आ गये ।

अपनी पत्नी के लौटने पर जमदग्नि ने पुत्रों को बुलाकर माता का सर काटने का आदेश दिया। परशु राम के भाई यह जघन्य कार्य करने को तैयार न हुए। जंगल से लौट कर आये हुए परशु राम को देख जमदग्नि ने उनको आदेश दिया कि वह अपनी माता और भाइयों के सर काट डाले ।

परशुराम ने इसका प्रतिरोध किये बिना एक ही वार में अपने भाइयों तथा माता के सर काट डाले ।

जमदग्नि ने प्रसन्न होकर पूछा- "बेटा, तुम कौन सा वर चाहते हो, मांग लो ।"

"भाइयों तथा माताजी को जिलाइये !" परशुराम ने जमदग्नि से वर मांगा ।

जमदग्नि ने उनको पुनर्जीवित कर दिया। अपनी तपो महिमा के प्रति परशुराम के विश्वास तथा उसकी सूक्ष्म बुद्धि पर जमदग्नि प्रसन्न हुए और आशीर्वाद दिया- "परशुराम, तुम कारण जन्मधारी हो, सदा चिरंजीवी बने रहोगे ।"

कार्त वीर्यार्जुन अपनी विजय यात्रा समाप्त कर अपनी राजधानी महीष्मती नगर को लौट रहा था। उसी मार्ग पर जमदग्नि का आश्रम था। उस समय राजा व सैनिक बहुत ही भूखे थे ।

जमदग्नि ने कामधेनु अंशवाली अपनी होम धेनु की वजह से उन सबको भारी भोज दिया। वह गाय जो चीज़ चाहे, असंख्य लोगों को भी देने की क्षमता रखती है। कार्तवीर्य ने सोचा कि ऐसी गाय अगर उसके पास रहे तो सैनिकों के लिए आहार की समस्या सब प्रकार हल हो सकती है, इस लोभ में पड़कर उसने अपने सैनिकों को आदेश दिया कि वे उस गाय को महीष्मती नगर में हांक कर ले आवे। इस पर जमदग्नि ने उनका विरोध किया। तब दुष्ट सैनिक उनको जमीन पर ढकेल कर गाय को खींच कर ले गये ।

सच्चा राजकोष

प्राचीन काल में एक समय अमरावती राज्य पर राजा विक्रमसेन राज करते थे। उनके मन में राज्य के अधिकारियों के प्रति ज़रा भी आदर-भाव न था, क्योंकि वे सब राजा की झूठी तारीफ़ किया करते थे।

राजा विक्रमसेन जब-तब वेश बदल कर साधारण मनुष्य के रूप में गाँवों में घूमते और प्रजा के सुख-दुख का हाल स्वयं पता करते।

एक दिन विक्रमसेन छद्म वेश में एक जंगल से होकर जा रहे थे, उस वक्त उन्हें कहीं से बंसी की ध्वनि सुनाई दी। राजा उस ध्वनि की दिशा में आगे बढ़े तो थोड़ी दूर पर उन्हें एक गड़ेरिया दिखाई दिया। वह सोलह साल का था। वैसे वह चिथड़े में था, पर देखने में बहुत सुंदर लग रहा था। उसकी असाधारण सुंदरता देख कर राजा को आश्चर्य हुआ। उन्हों ने सोचा कि वह भी उन्हीं की भाँति छद्मवेश में देश का भ्रमण करने वाला कोई राजकुमार होगा।

उस युवक के साथ बातचीत करने पर राजा को पता चला कि वह एक गरीब परिवार का युवक है।

गड़रिये का नाम सदाशिव था। उसने राजा के सवालों का सरल और सीधा जवाब दिया।

राजा ने गड़रिये से पूछा- "सदाशिव! क्या तुम मेरे साथ चलोगे? तुम्हें अच्छे वस्त्र तथा अच्छा भोजन के साथ अच्छी नौकरी भी दूँगा!" सदाशिव मान गया।

अमरावती नगर में जाकर राज महल में प्रवेश करने पर सदाशिव को पता चला कि उसको अपने साथ ले आने वाले व्यक्ति उस देश के राजा स्वयं हैं। राजा का उस पर यह जो अनुग्रह हुआ था, उसे देख वह मन ही मन अत्यंत प्रसन्न हुआ।

राजा के आदेशानुसार राज कर्मचारियों ने गड़रिये की पोशाक निकाल कर सदाशिव को राजोचित पोशाक पहनाई। उसे पढ़ना-लिखना

गोविंद सहाय

सिखलाया और राजसभा के तौर-तरीका से परिचित कराया। थोड़े दिन बीतने के बाद राजा ने सदाशिव को अपने खज़ाने का कोशाध्यक्ष नियुक्त कर दिया। राजा का विस्वास था कि करोड़ों की संपत्ति भरे उस खजाने के लिए सदाशिव से बढ़कर कोई अधिक विश्वास पात्र अधिकारी नहीं मिल सकेगा !

नौकरी में प्रवेश करने के पहले सदाशिव राजा की अनुमति लेकर कुछ दिनों के लिए अपने गाँव चला गया। वह उन सारी जगहों पर फिर एक बार गया, जहाँ जहाँ वह भेड़ चराने जाया करता था और खेलता-कूदता था। वहाँ पर उसने बंसी बजाई, इसके बाद अपने रिश्तेदारों में उपहार बाँटे। कुछ लोगों ने उस से पूछा- "राज दरबार की नौकरी कैसी है ?" उसने गाँव वालों को यही सलाह दी- "तुम लोग इस गाँव को छोड़ कर कहीं मत जाना। राजा के दरबारों में तो बिलकुल ही काम न करना। सच्चा सुख तो बस यहीं पर है !"

इसके बाद अमरावती लौट कर सदाशिव ने राजा के खजांची के रूप में काम करना शुरू किया। सदाशिव इमानदार तो था, साथ ही वह अत्यंत विश्वास पात्र भी था। वह दिल लगाकर अपने कर्तव्य का पालन करने लगा। राजा भी सदाशिव के व्यवहार और उसकी कर्तव्य-निष्ठा पर बहुत ही प्रसन्न थे। गाँव वालों को तो उसने इसलिए राज दतबार में जाकर नौकरी करने से मना किया था कि राजा-महाराजाओं के यहाँ नौकरी करना तलवार की धार पर चलने के समान होता है। यदि कोई अपने काम में जरा भी चूक गये तो उसको कठिन दण्ड मिलता है।

क्यों कि गाँव वालों में अधिकांश लोग भोले-भाले होते हैं। जरा सी भूल हुई तो वे घबड़ा जाते हैं। ये ही सारी बातें सोचकर उसने अपने गाँव वालों को ऐसी सलाह दी थी।

कुछ वर्ष बाद राजा विक्रमसेन का स्वर्गवास हो गया। राजा के पुत्र कनकसेन का राज्याभिषेक हुआ। राज्य के बहुत से अधिकारी सदाशिव से असंतुष्ट थे, क्योंकि राजा विक्रम सेन उसके प्रति विशेष आदर दिखाया करते थे। राजा कनकसेन के गद्दी पर बैठते ही उन

अधिकारियों ने जाकर उन से शिकायत की- "महाराज, आप के पिताजी का आश्रय पाकर सदाशिव ने खज़ाने को लूट लिया है। उस पर कड़ी नज़र रखिये।"

राज्य के अधिकारी अगर राजा के हित की कामना से कोई सलाह दें तो सुने बिना कैसे रह सकते हैं? उन्होंने अधिकारियों से कहा- "सदाशिव के कुकृत्यों का पता लगाने केलिए कोई उपाय बताइये। मैं उसको दण्ड दूँगा।"

अधिकारियों ने सुझाया- "महाराज, आप के दादा के यहाँ रत्नखचित मूठवाली एक छुरी थी। उसके रत्न निकाल कर वह हड़प गया है। उसे छुरी दिखाने केलिए कहिए तो सच्चाई अपने आम प्रकट हो जायेगी।"

राजा ने सदाशिव को बुलवाकर पूछा- "मैं ने सुना है कि मेरे दादा की रत्नजड़ित छुरी तुम्हारे अधीन में है। क्या उसे लाकर मुझे दिखला सकते हो?"

"महाराज, उस छुरी की मूठ से रत्न निकलवा कर आप के पिताजी ने आभूषण बनवा लिये थे।" सदाशिव ने जवाब दिया।

सदाशिव की बातें आखिर सच साबित हुई, क्यों कि इसके कई प्रयक्षदर्शी गवाह भी मिल गये।

राजा ने शिकायत करनेवालों से कहा- "मेरी दृष्टि में सदाशिव निर्दोष मालूम होता है।"

"महाराज, आप सदाशिव को आदेश दीजिए कि वह खज़ाने की सारी चीज़ों की सूची बना कर ले आये। फिर पुरानी सूची के साथ तुलना करके देखिए, तब आप को पता चलेगा कि खज़ाने की कौन-कौन सी चीज़ें गायब हैं।" शिकायत करने वाले अधिकारियों ने सदाशिव को नीचा दिखाने का एक दूसरा उपाय सुझाया।

राजा के आदेशानुसार सदाशिव अपने अधीनस्थ सारी चीज़ों की सूची बनाकर ले आया। उस सूची के मुताबिक़ सारी चीज़ों की प्रत्यक्ष जाँच केलिए राजा स्वयं सपरिवार खज़ाने में पहुँचे।

खज़ाने को देखने पर राजा के आनंद की

कोई सीमा न रही। उसमें सारी चीज़ें करीने से सजाई गई थीं। सूची के आधार पर उन चीज़ों की तुलना करके देखने का काम बड़ी ही आसानी से पूरा हो गया। जाँच से पता चला कि खज़ाने की कोई वस्तु गायब नहीं हुई है।

राजा खज़ाने से निकलते हुए सदाशिव की तारीफ़ करने लगे, तभी एक अधिकारी ने खज़ाने की एक दीवार की ओर संकेत करते हुए कहा- वहाँ कोई दराज़ मालूम होता है। शायद उसमें कोई चीज़ छिपा कर रखी गई हो!

राजा ने सदाशिव की ओर मुड़कर पूछा- "सदाशिव, बताओ, उस दराज के अन्दर क्या क्या चीज़ें हैं ? और उनको तुमने इस सूची में क्यों नहीं जोड़ा ?"

"महाराज, क्षमा कीजिएगा। उस दराज़ के अन्दर मेरी निजी संपत्ति है-मेरी अमूल्य निधि ! इसलिए मैं ने उन चीज़ों को खज़ाने की सूची में शामिल नहीं किया।" सदशिव ने उत्तर दिया।

सदाशिव की ये बातें सुनकर राजा का विश्वास जाता रहा और उसे लगा कि सदाशिव पर अधिकारियों का सन्देह निर्मूल नहीं है। उन्हों ने क्रोध में आकर सदाशिव को आदेश दिया- "दराज के किवाड़ खोलो।"

सदाशिव ने लोहे का किवाड़ खोल दिया। उसके पिछले भाग में गड़ेरिये का एक कंबल, एक बंसी और पुराने जूते मात्र पड़े थे।

राजा ने चकित होकर पूछा- "क्या यही तुम्हारी अमूल्य निधि है ?"

"जी हाँ महाराज। यह मेरे जीवन का सच्चा राज कोष है। इसी में मेरी आत्मा की शान्ति और सुख है। इसीलिए मैं ने इसे इतना संभाल कर रखा है।"

राजा कनकसेन कोषाध्यक्ष की बातों से बहुत प्रभावित हुए। सोचने लगे- "यह आदमी राजकोष के हीरे-जवाहिरातों की चमक-दमक से चकाचौंध होकर अपनी गुदड़ी को नहीं भूला। इसकी सच्चाई और इमानदारी कितनी बेमिसाल है।" राजा का सदाशिव के प्रति आदर और विश्वास और भी बढ़ गया।

इधर चुगलखोर अधिकारियों ने अनुभव किया कि सूरज पर कीचड़ उछालने से अपने ही चेहरे पर गिरता है।

दिखाई दिया ।

राक्षस पाताल की ओर बढ़ा । पर बडी कोशिश करने के बावजूद कई दिन चलते रहने पर भी कंकाल देवी को उतारना अथवा गिराना उस केलिए संभव न हुआ ।

इस पर राक्षस की आशाओं पर पानी फिर गया । कंकाल देवी के बोझ से राक्षस दबता जा रहा था । वह सोचने लगा कि इस पिशाचिनी से पिंड छूटे तो राहत मिले ।

काफी दूर चलने के बाद उसने एक ब्रह्म राक्षस से निवेदन किया- "प्रभु, मैं इस कमबख्त कंकाल देवी को कई दिनों से ढो रहा हूँ । कृपया इसको मेरी पीठ पर से उतारने का कोई उपाय बतला दीजिए ।"

"अबे, तुम इस छोटी सी बात को लेकर डरते हो ? इस प्रकार डर जाना हमारी जाति केलिए अपमान की बात होगी । तुम एक काम करो, इसको जहाँ से लाये हो, वहीं पर छोड दो ।" यों कह कर ब्रह्म राक्षस ने गुप्त रूप से उसे सलाह दी ।

कंकाल देवी का पिंड छुड़ाने के विचार से राक्षस वापस मुड़कर चला जा रहा था तब रास्ते में उसे एक गड़ेरिया दिखाई दिया । उसने मज़ाक करते हुए पूछा- "महाशय, तुम इस गधे के बोझ को कितने दिनों से ढो रहे हो ?"

राक्षस चौंक कर सोचने लगा- 'यह कोई असाधारण व्यक्ति मालूम होता है ! न मालूम इस को कैसे पता चल गया कि मैं इतने दिनों से इस बूढी को ढो रहा हूँ ।' यों सोच कर उस ने बिनती की- "भाई साहब, मेरा यह उपकार कर दो ।" इन शब्दों के साथ राक्षस ने अपनी व्यथा व्यक्त की ।

"अच्छी बात है । तुम इसको मेरी पीठ पर चढ़ा दो !" गड़रिये ने उत्साह पूर्वक उत्तर दिया ।

राक्षस खुश हुआ और उसने उस बूढी कंकाल देवी को गड़ेरिये की पीठ पर चढ़ा दिया । तुरंत गड़रिया जादूगरनी को लेकर दक्षिण दिशा की ओर भागने लगा ।

राक्षस ने सोचा कि यह बूढी गड़रिये को नहीं छोड़ेगी और न यह गड़रिया लौट कर

आएगा। यों विचार कर राक्षस भेड़ों की रेवड़ को हांक कर ले जाने लगा।

राक्षस दो ही क़दम आगे बढ़ा होगा कि गड़ेरिया उसके सामने प्रकट हो गया।

"अरे मामा, तुम इस बूढी को मेरे हाथ सौप कर मेरी भेड़ों की रेवड़ को हांक ले जाना चाहते हो ?" गड़रिये ने हँसकर पूछा।

उसकी बात को अनसुनी करने का अभिनय करते हुए राक्षस ने पुछा-"अबे, तुमने उस पिशाचिनी से पिंड कैसे छुड़ा लिया है ?"

"यह कौन सी बडी बात है ? यहाँ से थोड़ी दूर पर एक तालाब है जिसमें अभागे कूद कर आत्म हत्या करते हैं। उस में बूढी को गिराकर चला आया। वह मेरे कंबल से ऐसी चिपक गई कि छोड़ती ही न थी, इसलिए मैं उस पिशाचिनी के साथ कंबल को भी फेंक कर चला आया।" गड़रिये ने जवाब दिया।

गड़रिये के उपकार पर खुश होते हुए राक्षस ने उस से कहा- "बेटा, तुम एक काम करो। मैं इस देश की राजकुमारी के अंदर प्रवेश कर जाऊँगा। मैं उसको गूंगा, अंधा, बनाऊँगा। उसे अचेत करूँगा। तुम इकतीसवें दिन आकर राजकुमारी के कान में चिल्ला कर कहो कि अरी लड़की, मैं गड़रिया हूँ। बस, तब मैं उसको छोड़कर चला जाऊँगा। इसके बाद तुम्हारा भाग्य कैसे चमकेगा, तुम खुद सोच लो।" पर तुम अच्छी तरह से याद रखो कि इस

मंत्र का प्रयोग तुम को केवल एक ही बार करना होगा। फिर लोभ में पड़कर तुम दुबारा इस मंत्र का प्रयोग करने का दुस्साहस करोगे, तो उसका परिणाम बहुत बुरा होगा। चूँकि तुमने मेरा उपकार किया है, इसलिए मैं तुम्हारा अहित करना नहीं चाहता।"

"अच्छी बात है।" यह कह कर गड़रिया वहाँ से चल पड़ा। शहर पहुँच कर उसने सर्वत्र यही बात सुनी कि राजकुमारी एक महीने से गूंगी बन गई है। उस से बोलवाने वाले को आधा राज्य देकर उसके साथ राजकुमारी का विवाह किया जाएगा।

गड़रिये ने राज महल के पास पहुँच कर देखा कि कई राज वैद्य तथा ओझा निराश हो

लौट रहे हैं। गड़रिये का वेष देख कर सब उससे घृणा करने लगें, किन्तु उसको वैद्य के रूप में आये हुए देख द्वारपालो ने राज महल के अन्दर उसे प्रवेश करने दिया।

गड़रिया शान से राज महल के अन्दर चला गया। उसने मंत्र-तंत्र पढ़कर अपना रोब जमाया। आखिर राक्षस के द्वारा बतायी गई बातें राजकुमारी के कान में कहीं।

राजकुमारी के भीतर प्रवेश किया हुआ राक्षस उसको छोड़कर जाने लगा। मगर इसके पूर्व उसने गड़रिये को चेतावनी दी- "सुनो, यही अंतिम मंत्र है। तुम इसी प्रकार किसी दूसरे का भी इलाज करोगे तो तुम्हारी खोपडी फूट जाएगी। खबर दार।" इसके बाद राक्षस राजकुमारी को छोड़कर चला गया।

राजकुमारी दूसरे ही क्षण उठ बैठी और खिल-खिला कर हंसने लगी। क़िले के अंदर मंगल वाद्य गूंजने लगे। गडरिया उस राज्य का राजा बन बैठा। पर कहानी यहीं पर समाप्त नहीं हुई।

राक्षस अपनी आदत के अनुसार इसी प्रकार पड़ोसी देश की राजकुमारी के भीतर प्रवेश करके उसको सताने लगा। वह भी गूंगी, बहरी, अंधी बनने के साथ अचेत रहने लगी थी।

राजकुमारी के पिता ने कई वैद्यों को बुलवाकर इलाज कराया, ओझाओं के द्वारा झाड़-फूंक व मंत्र-तंत्र करवाये। पर कोई लाभ न हुआ। आखिर गड़रियेवाले राजा की पूर्व कहानी सुनकर उसके पास संदेशा भेजा।

यह समाचार मिलते ही गड़रियेवाला राजा एक दम घबरा गया। क्यों कि राजकुमारी को छोड़कर जाते हुए राक्षस ने उसे जो चेतावनी दी थी, वे बातें उसे याद हो आई।

उसने पड़ोसी देश के राजा से विनय पूर्वक निवेदन किया- "महानुभव, मैं कोई मांत्रिक-तांत्रिक नहीं हूँ। न वास्तव में कोई वैद्य ही हूँ। किसी वरदान के कारण मैं पहले राजकुमारी के भीतर से भूत को भगा सका। मेरी मंत्र-शक्ति उसी दिन खतम हो गई। इस वक्त मैं कुछ नहीं कर सकता हूँ।"

पर पड़ोसी देश के राजा ने उसकी बातों पर कोई ध्यान न दिया, उसने सोचा कि जब गड़रिये वाले राजा ने गूंगी व बहरी राज कुमारी को एक बार बोलने योग्य बनाया है तो दूसरी बार क्यों नहीं कर सकता ? वह जान-बूझकर बचना चाहता है। यही विचार करके उसने दूतों के द्वारा फिर संदोशा भेजा- ''यदि तुम हमारी इच्छा की पूर्ति करोगे तो उत्तम होगा। वरना तुम हमारे साथ युद्ध करने केलिए तैयार हो जाओ।''

गड़रियेवाला राजा पशोपेश में पड़ गया और आख़िर यह सोच कर पड़ोसी देश केलिए चल पड़ा- ''अच्छी बात है, चाहे जो हो जाय, जाकर अपने इस मंत्र का प्रयोग करके देखता हूँ।''

इसके बाद वह राज महल के अंदर पहुँचा। पहले की भांति मंत्र-तंत्र व जादू-टोने का अभिनय किया। अंत में राजकुमारी के कान में ऊँची आवाज़ में चिल्लाकर यों कहा- ''सुनो यह अन्तिम मंत्र है, तुम मेरी बातों को बडी सावधानी से सुन लो।

उस दिन हमने तालाब में जिस कंकाल देवी पिशाचिनी को फेंक दिया था उस समय हमने सोचा कि वह मर जाएगी, पर वह मरी नहीं है। सुना है कि जिंदा होकर बाहर निकल आई है। यह भी सुना है कि वह तुम्हारी खोज करते चली आ रही है। कहते हैं कि वह इस नगर की सीमा तक पहुँच गई है। तुमने मेरा बड़ा उपकार किया था। इसलिए मैं पहले ही यह बात तुम्हारे कान में डालने के ख्याल से यहाँ तक चला आया हूँ...''

उसकी बातें पूरी भी न हो पाई थीं कि ''कंकाल देवी'' का नाम सुनते ही'' बापरे। बाप।'' चिल्लाते राक्षस पाताल लोक की ओर भाग खड़ा हुआ। राक्षस के निकलते ही राजकुमारी ने आँखें खोल कर चतुर्दिक देखा और ठठाकर हंस पड़ी। अपनी पुत्री को स्वस्थ हुए देख राजा ने अपने वचन के अनुसार उस युवक के साथ राजकुमारी का विवाह बड़ी धूम-धाम से संपन्न किया।

इस प्रकार भाग्यवान गड़रिया दो रानियों का पति बन गया।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ अक्तूबर १९८३ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

K. S. Vijayaker

Pranlal Patel

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ अगस्त १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

जून के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो: भजन किया, भगवान मिल गया।

द्वितीय फोटो: रोने से आसमान हिल गया।

प्रेषक: ऐ. पी. सिंह, बी. पी. एल. एम्प्लाइस कॉलोनी, डाक: सरपाक, खम्मम जि. (आं.प्र.)

पुरस्कार की राशि रु. ५० इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

क्या आप जानते हैं? उत्तर

१. गोवापुरी। २. राजा उग्रसेन के द्वारा, उस समय आगरा का नाम आग्रावन था ३. डोर्जेलिग–डोर्जे जाति का निवास स्थान ४. संस्कृत में काष का अर्थ प्रकाश होता है? काशी का अर्थ भक्तों के लिए प्रकाश-पथ। वाराणसी नाम का कारण वरुणा और अस्सी नदियाँ हैं। वे दोनों नगर के घेरे में बहती हैं। ५. चण्डीगढ़ (हरियाणा) में स्थित जाकिर हुस्सेन का गुलाब-वन ६. घूम, दार्जिलिग से आठ किलो मीटर की दूरी पर। ७. आगरा किले में स्थित मोती मसजिद।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

खांसी को
सुलाए
ग्लायकोडिन
Glycodin
• दिमाग में खांसी के केन्द्र को काबू में करे.
• गले की खराश से राहत दिलाये.
• फेंफड़ों में जमा बलगम निकाले.
• छाती में स्नायु का दर्द मिटाये.
ग्लायकोडिन-एक विश्वसनीय खांसी की दवा
जो ४ तरह से असर करे.

राजू बिना ब्रश के पेंटिंग करता है

राजू बहुत होशियार लड़का था. उसे पेन्टिंग करना बहुत अच्छा लगता था. लेकिन पेन्टिंग करते वक्त उससे पानी गिर जाता था और फर्श गन्दा हो जाता था. उसके कपड़े और हाथ भी रंग जाते थे.

माँ को उसकी हरकतें पसन्द नहीं थीं. इसलिए उन्होंने पेन्टिंग करना मना कर रखा था.

मोहन को राजू पर तरस आया. उसने राजू को अपने 'ऑइल पेस्टल' के डिब्बे दिखाये. न पानी की ज़रूरत, न ब्रश की. न पानी फैलने का डर, न फर्श खराब होने का.

डिब्बे से किसी भी रंग का पेस्टल उठाओ और चित्र बनाना शुरू कर दो...और रंग भी कितने सारे! पैरट ग्रीन, लॉब्स्टर ऑरेन्ज, पीकॉक ब्लू, सनफ्लावर यलो... और भी न जाने कितने.

फिर तो राजू की माँ ने भी उसे ऑइल पेस्टल का एक डिब्बा ला दिया.

VISION 782 HIN

कॅमल

ऑइल पेस्टल्स

१२, २४ और ४८ रंगों में उपलब्ध

कॅम्लिन प्रायव्हेट लि.
आर्ट मटीरियल डिविजन,
बम्बई-४०० ०५९.

कॅम्लिन मनमेकॅनिकल पेन्सिल बनानेवालों की ओर से

Results of Chandamama—Camlin Colouring Contest No. 30 (Hindi)

1st Prize: Pankaj Madhusudan Chitnis, Thane-421 201. *2nd Prize:* Kabita B. Takur, Bombay-400 016. Sunil Kumar, Shamia-247 776. Rohitas S. Varma, Bombay-400 057. *3rd Prize:* Anil Tomer, Meerut. Kum. Leena Khanna, Dhampur. Sandhya Dhawan, Lucknow. Arun Kumar Singh, Jamshedpur-831 609. Ravinder Mohan Garg, Meerut Cant. Neeraj Kumar Singh, Hamirpur. Devendra Nilkant Akare, Mohadi. Varsha Sharma, Gangob. Sudha Gupta, Banda. Poonam Sharma, Bulandshahar.

हुर्रे ! हुर्रे !
ह है गोल्डस्पॉटिंग डे !
गोल्डस्पॉटिंग के लिए आ रहे हैं
हुर्रे!
Fun means Goldspotting
GOLD SPOT